श्रीगोवर्धनमठ-ग्रन्थमालायास्तृतीयं प्रसूनम्—

वाराहीतन्त्र-रुद्रयामलान्तर्गता

सार्द्धनवचण्डीपद्धतिः



लेखकः
पं० राधावल्लभव्यासात्मजः
पं० मदनमोहनव्यासः
केकड़ी (अजयमेरुः)
(राजस्थानम्)



प्रकाशकः
श्रीशङ्कराचार्यगोवर्धनमठः
जगन्नाथपुरी
(उडीसा)

प्रथमावृत्तिः
१०००



मूल्यम् १०)

T

T

T

श्रीगोवर्धनमठ-ग्रन्थमालायास्तृतीयं प्रसूनम्—

वाराहीतन्त्र-रुद्रयामलान्तर्गता

सार्द्धनवचण्डीपद्धतिः



लेखक :
पं० राधावल्लभव्यासात्मजः
पं० मदनमोहनव्यासः
केकड़ी (अजयमेरुः)
(राजस्थानम्)





प्रकाशक :
श्रीशङ्कराचार्यगोवर्धनमठः
जगन्नाथपुरी
(उडीसा)

प्रथमावृत्तिः
१००१



मूल्यम् १

T

विषयानुक्रमणिका



❀ भगवान् श्रीचन्द्रमौलीश्वरो विजयते ❀

श्रीमन्निखिल-महीमण्डलाचार्यचक्रचूडामणीनां सर्वतन्त्रस्वतन्त्राणां यति-पतिभास्कर-प्रभृतिविविधविरुदावली-विभूषितानां राजराजेन्द्रसमभ्यर्चित-चरणारविन्दानामद्वैतमतप्रवर्तकजगद्गुरु-भगवत्पाद-श्रीशङ्कराचार्यसंस्थापित - श्रीगोवर्धनपीठाधीश्वराणां श्रीनिरञ्जनदेवतीर्थ-स्वामि- चरणानाम्—

शुभाशीर्वचांसि

इह संसारे नानाविधान् अर्थान् नैकविधांस्तदुपभोगांश्चान्ते परमपदमभिलषतां कृते जगज्जननी दुर्गाम्बैव परं शरणमिति "ददाति वित्तं....आराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गापवर्गदा...." इत्यादि सुप्रसिद्धचरमेतत् ।

दुर्गासप्तशत्या बहवः प्रयोगास्तन्त्रागमेषु निर्दिष्टाः सन्ति । श्रद्धालुजना आसेतुहिमाचलं तत्तत्प्रयोगाननुतिष्ठन्तस्तदनुसारिफलभाजश्चावलोक्यन्ते । तेष्वन्यतमः सार्द्धनवचण्डीनामकोऽयं प्रयोगो वाराहीतन्त्र-रुद्रयामलयोरुपलभ्यते । एष हि केवलमेकदिवससाध्यः सद्यःप्रत्ययकारी अमोघो बहुधा परीक्षितश्च । एतत्प्रयोगानुष्ठातृणां कर्मकाण्डविदुषां सौविध्याय राजस्थानान्तर्गत - केकडीवास्तव्येन विद्वद्वरेण श्रीमदनमोहनव्यासेन पद्धति - रूपेण निबद्धोऽयं ग्रन्थो लोककल्याणाय भवेदिति भगवन्तं चन्द्रमौलीश्वरं प्रार्थयते ।

निरञ्जनदेवतीर्थस्वामी

श्रीः

प्राक्कथन

भारतीय आस्तिकपरम्परा में भगवती दुर्गा की प्रसन्नता के लिए र्गा-सप्तशती' का पाठ सर्वोत्तम माना गया है। हजारों वर्षों से चले रहे इस प्रयोग के विधि-विधानों का विस्तार बहुत अधिक रूप से हुआ मन्त्रशास्त्र के उपदेशक आगमों में दुर्गासप्तशती को वेदकल्प माना है इसके पाठ की अनेकानेक प्रक्रियाओं का वहाँ निर्देश मिलता है। शाक्त-पासना में श्रीकुल और कालीकुल के क्रम में आम्नायदृष्टि को ध्यानमें कर इसके पूर्वाङ्ग के रूप में गणपति, भैरव तथा अन्य त्रिशक्ति देवियों न्त्रों का जप भी इसके पाठ में विहित है।

आस्तिकसमाज नवरात्रोपासना में अथवा अन्य दिनों में अपने शिष्ट कार्यों की सिद्धि और कष्टनिवारण के लिए नवचण्डी, शतचण्डी, चण्डी, अयुतचण्डी, लक्षचण्डी आदि प्रयोगों को करवाता रहता है। अनुष्ठान विधानों में सद्यःफलदायी 'सार्ध-नवचण्डी' नामक एक प्रयोग नों द्वारा किया जाता है। यह प्रयोग रुद्रयामल तथा वाराहीतन्त्र में प्रकार उपलब्ध होता है। यथा—

नव सार्द्धं जपेद् यस्तु मुच्येत्प्राणान्तकाद्भयात् ।
राज्यं श्रीः सर्वसम्पत्तिः सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥१॥
प्रयोगोऽयं महागुह्यो देवानामपि दुर्लभः ।
ततोऽहं संप्रवक्ष्यामि सावधानाऽवधारय ॥२॥
मधुकैटभनाशं च महिषासुरघातनम् ।
शक्रादिस्तुतिरेवातो देवीसूक्तं पुनस्तथा ॥३॥
नारायणीस्तुतिश्चैव फलानुकीर्त्तनं तथा ।
ततो वरप्रदानं च ह्यर्धपाठोऽयमुच्यते ॥४॥

अर्द्धपाठस्त्वयं प्रोक्तः सर्वकामफलप्रदः ।
अर्द्धपाठेन रहितं नवपाठफलं न हि ॥५॥

ब्राह्मणास्त्वत्रैकादश । तेषु नव ब्राह्मणाः पूर्णत्रयोदशाध्यायपाठ-
त्तारः । एकोऽर्द्धपाठकर्त्ता । एको यजुर्वेदीय-षडङ्गरुद्राष्टाध्यायपाठ-
र्त्ता । एवमेकादश ब्राह्मणाः प्रयोगकर्त्तार इति ।

(सप्तशतीसर्वस्व पृष्ठ ५५७)

'शतचण्डी' प्रभृति सभी अनुष्ठान इतने सरल एवं स्वल्पसमय तथा
वल्पव्ययसाध्य नहीं हैं, जितना यह प्रयोग अतिसरल, केवल एक ही दिन
ं सम्पन्न होनेवाला एवं स्वल्पव्ययसाध्य तथा हरप्रकार की विपत्ति का
नवारण करनेवाला, हरप्रकार की मनोभिलषित कामना की पूर्त्ति करने
ाला है । यह एक सद्यःप्रत्ययकारी अनूठा प्रयोग है । कई बार इसके
ाश्चर्यकारी चमत्कार देखे गए हैं । यह एक परीक्षित प्रयोग है ।

यह प्रयोगविधान परमादरणीय आगमाचार्य स्व० पं० सरयूप्रसादजी
द्विवेदी के 'सप्तशतीसर्वस्व' ग्रन्थ से संकलित किया गया है । अतः हम सब
नके हृदय से कृतज्ञ हैं ।

यह प्रयोग अपने आप में अनूठा होने पर भी इधर राजस्थान में
सके सम्बन्ध में जानकारी विरले व्यक्तियों तक ही सीमित थी । किन्तु इसके
चार का मूलश्रेय अजमेर के सुप्रसिद्धचिकित्सक स्व० डा० अम्बालालजी
दाधीच' को है, जिनके संकेतानुसार विगत २ दशकों से राजस्थानी
ास्तिकजनता लाभान्वित होरही है ।

इस प्रयोग के सद्यःप्रत्ययकारी, आश्चर्यजनक प्रभाव को देखकर
ागद्गुरु शङ्कराचार्य-पुरीपीठाधीश्वर श्री १००८ श्रीनिरञ्जनदेवतीर्थजी–
महाराज ने जनसाधारण के हितार्थ कर्मकाण्डिविद्वज्जनों के सौविध्य के
लिए इस प्रयोग को पद्धतिरूप में निबद्ध करने के लिए मुझे आदेश दिया ।
तदनुसार मैंने इस प्रयोग को पद्धतिरूप में लिखा । क्योंकि इस पद्धति के
अभाव में प्रायः कर्मकाण्डियों को 'अर्धपाठ' के क्रम में व्युत्क्रम एवं त्रुटि का

T

होना स्वाभाविक था। तथा अनावश्यक एवं गौणकर्म में विस्तार तथा मुख्यकर्म में अतिशीघ्रता एवं संक्षेप करने की त्रुटि देखी गयी। अतः उसी त्रुटि से बचने के लिए इस पद्धति का स्वतन्त्ररूप से निर्माण हुआ है।

इस एकही लघुपद्धति से मुख्यकार्य जैसे प्रधानभवानीशङ्कर की पूजा सार्द्धनवपाठ का क्रम एवं हवन तथा अङ्गभूत गणेशादिदेवों का आवाहनपूजन कुशकण्डिका, पुण्याहवाचन आदि कर्म 'अथ से इति' तक (सम्पूर्ण प्रयोग) सम्पन्न होजावेगा।

इस पद्धति के निर्माण में जगद्गुरु-शङ्कराचार्यजी महाराज का आदेश एवं शुभाशीर्वाद ही एकमात्र कारण है। अतः जगद्गुरुजीमहाराज के चरणकमलों में शतशः साष्टाङ्गनमनपूर्वक यह कृति उनकी सेवामें समर्पित करता हूँ।

इस पद्धति के मुद्रण के लिए 'नापासर' (बीकानेर) के जिन श्रद्धालु दानदाताओं ने जो दान दिया है, उन सभी का आभारप्रदर्शन करते हुए भगवती दुर्गा से उनके कल्याण की कामना करता हूँ।

इस पद्धति के अन्त में एक परिशिष्ट भाग भी जोडा गया है, जिसके आधार पर कर्मकाण्डी विद्वान् इसी पुस्तिका से 'ग्रहशान्ति' (नवग्रहमख) भी करा सकेंगे। जैसे परिशिष्ट में नान्दीश्राद्ध, अधिदेव, प्रत्यधिदेव, आदि के स्थापन के मन्त्र भी रख दिये हैं। अवशिष्ट ग्रहशान्ति का प्रकरण मूलपद्धति में विद्यमान है ही। तथा अत्यावश्यक एवं ज्ञातव्य कतिपय विषयों का भी संग्रह करदिया। अन्त में विद्वज्जनों से करबद्ध प्रार्थना है कि—'गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः' के अनुसार जो त्रुटियां दृष्टि में आवें, उनसे मुझे सूचित करने की कृपा करें, जिससे अग्रिमसंस्करण में उनका निराकरण किया जासके। शुभम्।

विनीत—

शङ्कराचार्यजयन्ती — **मदनमोहन व्यास**

वि. सं. २०४२ — **केकडी**

सार्द्धनवचण्डी' प्रयोग के सम्बन्ध में

आवश्यक ज्ञातव्य

इस प्रयोग के प्रमुख स्तम्भ ४ हैं— (१) कुमारीपूजन (२) प्रधान-पूजन (३) षडङ्गरुद्रपाठसहित सप्तशतीपाठ (४) एक पाठ के द्वारा हवन। प्रत्येक बिन्दु पर विशेष ज्ञातव्य—

(१) सर्वप्रथम कुमारी का पूजन करके, कुमारी से प्रयोग करने की आज्ञा प्राप्त करके ही प्रयोगारम्भ करना। कुमारी की आज्ञा पर ही यजमान को भावी अभीष्टसिद्धि का आभास होता प्रायः देखा गया है।

(२) प्रधानपूजन–अष्टदल पद्म के मध्य शक्तित्रिकोण वनाकर कलश स्थापन कर, भवानीशङ्कर का विधिवत् पूजन ही मुख्यकर्म है। अतएव इस प्रयोग में अनावश्यक ग्रहशान्ति किं वा अन्यविस्तार करना विहित नहीं है, अपितु संक्षेप में गणेश-मातृका-नवग्रह-पञ्चलोकपाल-कलश-स्थापन करके प्रधान की पूजा करें। जगदम्बा भवानी एवं शङ्कर की पृथक् २ मूर्त्ति रक्खे, अथवा एक ही भवानी की मूर्ति में भवानीशङ्कर की पूजा की जा सकती है।

(३) इस प्रयोग में ९ विद्वान् दुर्गासप्तशती का पूर्णपाठ करते हैं। दशवां विद्वान् सप्तशती का अर्धपाठ करता है। अर्धपाठ का क्रम पद्धति में स्पष्ट लिखा है। शेष एक विद्वान् रुद्राष्टाध्यायी का पाठ करना है। इस प्रकार ११ ब्राह्मणों का वरण होता है तथा आचार्य इन्हीं के अन्तर्गत होता है। पाठकर्त्ता विद्वान् स्नानसंध्याशील, दीक्षित तथा जहां तक हो सके प्रतिदिन सप्तशती का पाठ करने वाले होनें चाहिए।

पाठकर्त्ताओं को केवल एक सादा पाठ करना है अतः 'गीती' शीघ्री शिरः कम्पी·······' इत्यादि दोषों से बचते हुए, बडी शान्ति से श्रद्धाभक्ति-पूर्वक पाठ करें, चूंकि यही मुख्यकर्म है।

(४) अर्धपाठ का क्रम—अर्धपाठकर्ता विद्वान् आदि के कवचार्गला-कीलक-रात्रिसूक्त-नवार्णजपादि तथा अन्त के देवीसूक्त-रहस्यत्रयादि का

सारा क्रम पूर्णपाठकर्त्ताओं के समान एवं साथ ही करें। केवल सप्तशती अर्द्धपाठ का विधान इस प्रकार है – प्रथम-द्वितीय-तृतीय अध्याय सम्पू चतुर्थाध्याय में प्रारंभ से—"तं रस्मान् रक्ष सर्वतः' २७वें मंत्र तक (न संपूर्ण ४ अध्याय) पञ्चमाध्याय में —देवा ऊचुः ८वें मंत्र से—'सर्वा भक्तिविनम्रमूर्त्तिभिः।८२वें। मंत्र तक, ६,७,८,९,१० अध्यायों को छोड एकादशाध्याय में प्रारंभ से अर्थात् 'ऋषिरुवाच-देव्या हते तत्र' से 'लोका वरदा भव' ३५वें मंत्र तक, आगे ११, १२ अध्यायों का सम्पूर्णपाठ 'अर्धपाठ' माना गया है।

(५) पाठ सम्पन्न होने पर आचार्य वेदी बनाकर कुशकुण्डिकापूर्व गणपत्यादि स्थापित-पूजित देवताओं के लिए संक्षिप्त आहुति देकर 'सप्त शती' के एक पाठ के द्वारा हवन करें। पाठान्त में कुशकण्डिका का उत्तरा एवं 'पूर्णाहुति' होम करें। पुण्याहवाचन करके प्रधान की आरती अपरा क्षमापन का पाठ करें। आचार्य संकल्पादि कराकर, यजमान को गणेशज एवं भवानीशङ्कर का निर्माल्य आदि आशिका प्रदान करके विसर्जन करें।

तदनन्तर ९ कन्या तथा २ बटुक एवं वृत एकादश ब्राह्मणों क भोजन कराकर ताम्बूल, दक्षिणा देकर संतुष्ट करे। इसके बाद अपने परि जनों सहित स्वयं सानन्द प्रसाद ग्रहण करें।

(६) भारतीय आस्तिकजन तत्तत्कामनाओं की पूर्ति के लिए तत्त न्मन्त्रों से सम्पुटित दुर्गापाठ करते कराते आए हैं, किन्तु इस प्रयोग में किसी भी सम्पुट का विधान नहीं है, अपितु सादा पाठ हो विहित है।

(७) यद्यपि नवार्ण किंवा-सप्तशती के विनियोग-न्यासादि में देशभेद से कुछ भेद अवश्य मिलता हैं किन्तु पाठ में किसी प्रकार का मतभेद नहीं है। गोता प्रेस द्वारा प्रकाशित दुर्गापाठ की पुस्तकों में प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में जों ध्यान छपे हुए हैं, उनका पाठ विहित नहीं है।



T

❀ श्रीगणेशाय नमः ❀

वाराहीतन्त्र-रुद्रयामलयोरन्तर्गता

सार्द्धनवचण्डीपद्धतिः

वन्दे तां चण्डिकां देवीं, सर्वाभीष्टफलप्रदाम् ।
नवचण्डीप्रयोगेऽस्मिन्, सार्द्धसंख्यासमन्विते ॥१॥

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्त्तिं
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् ।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥२॥

नमो गुरुभ्यो गुरुपादुकाभ्यो, नमः परेभ्यः परपादुकाभ्यः ।
आचार्यसिद्धेश्वरपादुकाभ्यो, नमोऽस्तु लक्ष्मीपतिपादुकाभ्यः ॥३॥

अथ चन्द्रतारानुकूले शुभे मुहूर्त्ते, अथवा कृष्णपक्षाष्टमी-नवमी-चतुर्दशीनामन्यतमे दिवसे यजमानः सर्वाभीष्टसिद्धयर्थं सर्वतः प्राक् श्रीगणेशस्मरणपूर्वकं कुमारीं सम्पूज्य, तस्या आज्ञां गृहीत्वा सार्धनवचण्डीप्रयोगं प्रारभेत ।

तत्र सपत्नीको यजमानः कृतनित्यक्रियः शुद्धाहतवाससी परिधाय पूजाप्रदेशे शुभासने उपविश्य 'अपवित्रः पवित्रो वेति' मन्त्रेण आत्मानं पवित्रीकृत्य, शिखाबन्धनपूर्वकं—

ॐ ऐं आत्मतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा ।
ॐ ह्रीं विद्यातत्त्वं ,, ,, ,,
ॐ क्लीं शिवतत्त्वं ,, ,, ,,
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्वतत्त्वं ,, ,, ,, — एवं चतुर्भिर्मन्त्रैः चतुर्वारमाचमनं विधाय मूलमन्त्रेण (नवार्णमंत्रेण) प्राणायामं कुर्यात् । ततश्च गौरसर्षपैर्भूतोत्सादनं कुर्यात् ।

T

अपसर्पन्तु ते भूता, ये भूता भुवि संस्थिताः ।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥१॥
अपक्रामन्तु भूतानि, पिशाचाः सर्वतो दिशम् ।
सर्वेषामविरोधेन, पूजाकर्म समारभे ॥२॥

तत आचार्यः 'स्वस्ति न इन्द्रो....' इति मन्त्रेण यजमानस्य 'श्रीश्चते ....' इति यजमानपत्न्याश्च तिलकं कुर्यात् । 'तम्पत्नीभि ..' इति मन्त्रेण दम्पत्योर्ग्रन्थिबन्धनं कुर्यात् । ततः शान्तिपाठं पठेत्, यथा—

ॐ आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु व्विश्वतोऽदब्धासोऽ अपरीतासऽ उद्भिदः । देवा नो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे ॥१॥ देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्त्तताम् । देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा व्वयन्देवा न ऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥२॥ तान्पूर्व्वया निविदा हूमहे व्वयम्भगम्मित्रमदितिन्दक्षमस्रिधम् । अर्यमणं व्वरुणꣳ सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥ ३ ॥ तन्नो व्वातो मयोभु व्वातु भेषजन्तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः । तद् ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतन्धिष्ण्या युवम् ॥ ४ ॥ तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम् । पूषा नो यथा व्वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥५॥ स्वस्ति नऽ इन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽ अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्द्दधातु ॥६॥ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभंयावानो व्विदथेषु जग्मयः । अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो व्विश्वे नो देवाऽ अवसाऽऽगमन्निह ॥ ७ ॥ भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः ॥८॥ शतमिन्नु शरदोऽ अन्ति देवा यत्रानश्चक्रा जरसन्तनूनाम् । पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या

रीरिषतायुर्गन्तोः ।। ९ ।। अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः । व्विश्वे देवाऽ अदितिः पञ्च जनाऽ अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ।।१०।। द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । व्वनस्पतयः शान्तिर्व्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ।।११।। यतोयतः समीहसे ततो नोऽ अभयङ्कुरु । शन्नः कुरु प्रजाभ्योऽ भयन्नः पशुभ्यः ।।१२।। गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳ हवामहे व्वसो मम ।। आऽहमजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम् ।। १३ ।। अम्बेऽ अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन । स सस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्" ।।१४।।

ततो गणेशस्मरणम्—

ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ।।१।।
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ।।२।।
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ।
संग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ।।३।।
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ।।४।।
अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः ।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ।।५।।
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।६।।

T

सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम् ।
येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनं हरिः ॥७॥
तदेव लग्नं सुदिनं तदेव तारावलं चन्द्रबलं तदेव ।
विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि ॥८॥
लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः ।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥९॥
यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥१०॥
स्मृते सकलकल्याणभाजनं यत्र जायते ।
पुरुषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम् ॥११॥
सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः ।
देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः ॥१२॥
अतितीक्ष्ण महाकाय कल्पान्तदहनोपम ।
भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि ॥१३॥

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय श्रीमन्महागणाधिपतये नमः । ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः । ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः । ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः । ॐ शचीपुरन्दराभ्यां नमः । ॐ मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः । ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः । ॐ कुलदेवताभ्यो नमः । ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः । ॐ स्थानदेवताभ्यो नमः । ॐ वास्तुदेवताभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः । ॐ एतत्कर्मप्रधानदेवतायै नमः ।

ततो गंधपुष्पाक्षतै र्यज्ञभूमिं संपूज्य—

पृथ्वि ! त्वया धृता लोका, देवि त्वं विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां देवि ! पवित्रं कुरु चासनम् ॥

इति सम्प्रार्थ्य ॐ कूर्मासनाय नमः—इति गंधादिभिः आसनं सम्पूज्य,

पूजाकर्मार्थं स्वदक्षिणभागे, कलशस्थापनोक्तविधिना जलपूरितकलशं स्थापयेत् ।

तस्मिन् ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वंदमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः ।। अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशᳪ समानऽआयुः प्रमोषीः ।।१।। --इति मंत्रेण वरुणमावाह्य, संपूज्य, दक्षिणहस्तेन कलशमालभ्य अभिमन्त्रयेत्—

कलशस्य मुखे विष्णु ग्रीवायाञ्च महेश्वरः ।
मूले चैव स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ।।१।।
कुक्षौ तु सागराः सप्त, सप्तद्वीपा वसुन्धरा ।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः, सामवेदोऽप्यथर्वणः ।।२।।
अङ्गैश्च सहिता सर्वे, कलशं तु समाश्रिताः ।
गायत्री चैव सावित्री, शान्तिः पुष्टिस्तथैव च ।।३।।
सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः ।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं, दुरितक्षयकारकाः ।।४।। इति

अभिमन्त्र्य [1]अङ्कुशमुद्रया सूर्यमण्डलस्थानि तीर्थानि---"गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति । नर्मदे सिन्धु कावेरि ! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु" इति मन्त्रेणावाह्य संपूजयेत् ।

ततः कलशोदकेन पूजासंभारान् आत्मानञ्च 'आपोहिष्ठे...'तिमंत्रेण सम्प्रोक्षयेत् । ईशानकोणे रक्षादीपं प्रज्वाल्य, सम्पूज्य—

भो दीप त्वं ब्रह्मरूपस्त्वन्धकारनिवारकः ।
इमां मया कृतां पूजां गृह्णंस्तेजः प्रवर्धय ।।

(यावत् पूजां करिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरो भव । इति मन्त्रेण वा) सम्प्रार्थ्य, कर्मसाक्षिणे सूर्याय नमः--इतिसूर्यमपि संपूजयेत् ।

*अथ कुमारीपूजनम्

कुमारीपूजनसंकल्पः— ॐ तत्सदद्येत्यादि ...देशकालौ संकीर्त्य करिष्यमाण-सार्धनवचण्डीप्रयोगकर्मणि महाकाली - महालक्ष्मी - महा-

---

१.अङ्कुशमुद्रा परिशिष्टे द्रष्टव्याः । * कुमारी तु द्विवर्षादारभ्य दशवर्षपर्यन्तमेव ग्राह्या

T

सरस्वतीप्रसादार्थं कुमारीपूजनमहं करिष्ये । ततः कुमार्याः पूजनादौ पठनीया मन्त्राः—

समस्तजगतामाद्ये जगदाधाररूपिणि ।
कुमारीरूपमास्थाय प्रविशेदं गृहं मम ॥१॥
भवत्याः कीदृशं रूपं जाने मातरहं न हि ।
कुमारीरूपमेवेदं पश्यामि नरचक्षुषा ॥२॥
भक्तिं मदीयां विज्ञाय, त्वत्पादाम्बुजयोः शिवे ।
त्वया प्रकटितं रूपमीदृशं सर्वसिद्धये ॥३॥
दृष्टिः कार्या न मे पापेऽसच्चारे नासतः पथः ।
दृढा मे केवला भक्तिर्दातव्या सुरवन्दिते ॥४॥
शिवाद्यास्तवरूपं हि कीदृशं नेति जानते ।
ज्ञास्यामि को वराकोऽहं पाञ्चभौतिकविग्रहः ॥५॥

ततः कुमारिकाध्यानम्—

प्रसन्नवदनाम्भोजां प्रोद्यद्बालार्कसुप्रभाम् ।
रक्ताम्बरां रक्तमाल्यां नानालङ्कारभूषिताम् ॥१॥
सस्मितां देवकन्याभिः क्रीडारसपरायणाम् ।
ध्यायेत्कुमारिकां बालां स्वभक्ताभीष्टसिद्धिदाम् ॥२॥

एवं ध्यात्वा, कुमार्यां देवीमावाह्य, कुमार्याश्चरणौ प्रक्षाल्य तज्जलं मस्तके धारयेत् ।

ततो नवार्णमंत्रेण वस्त्रगन्धाक्षतमाल्यनैवेद्यफलताम्बूलदक्षिणादिभिः कुमारीं सम्पूजयेत् ।

ततो यजमानः "साद्धनवचण्डीप्रयोगमहं कर्तुमभिलषामि, आज्ञापयतु भवती"-इति कुमारीं प्रार्थयेत् । कुमारी ब्रूयात्—"यथाविधि कर्म कुरु" इति ।

अथ प्रधानसंकल्पः—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे

वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गतब्रह्मावर्तैकदेशे कन्याकुमारिकानाम्नि क्षेत्रे श्रीमहानद्योः गङ्गायमुनयोः पश्चिमे तटे नर्मदाया उत्तरे तटे बौद्धावतारे देवब्राह्मणानां सन्निधौ वर्तमाने वैक्रमे संवत्सरे शाके शालिवाहने त्रिपुष्करक्षेत्रे अमुकनामसम्वत्सरे अमुकायने अमुकर्तौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते सूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथा-यथास्थानस्थितेषु सत्सु एवंग्रहगुणविशेषणविशिष्टायां पुण्यतिथौ अमुक-गोत्रोत्पन्नोऽमुकशर्माऽहं । वर्माहं । गुप्तोऽहं राजतो व्यवहारतश्च प्रतिष्ठा-श्रीवृद्धिकामः सकुटुम्बस्यात्मनः शरीरारोग्यकामश्च एकादशब्राह्मणद्वारा यजुर्वेदीयवाजसनेयिसंहितान्तर्गतैकषडङ्गरुद्रपाठसहितमार्कण्डेयपुराणान्त-र्गतचण्डीचरित्रस्य श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीदैवतकस्य सार्धनवकरूपपाठपुरश्चरणं कारयिष्ये । तदङ्गतया गणपति-मातृका-वसो-र्धारा-नवग्रह-पञ्चलोकपाल-रुद्रकलश-स्वस्तिवाचनार्थवरूणकलश–ब्राह्म-णवरणादिकलशस्थापनपूर्वकप्रधानपूजनादिकमहं करिष्ये । तत्रादौ निर्वि-घ्नतासिद्धयर्थं गणपतिपूजनञ्च करिष्ये ।

गोधूमादिनिर्मितासने गणपतिं संस्थाप्य अक्षतान् गृहीत्वा ध्यायेत्–

ध्यानम्—

श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणैः पूजितं श्वेतगन्धैः
क्षीराब्धौ रत्नदीपं सुरनरतिलकं रत्नसिंहासनस्थम् ।।
दोर्भिः पाशाङ्कुशेष्टाभयवरमनिशं चन्द्रमौलिं त्रिनेत्रं
ध्यायेच्छान्त्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीसमेतं प्रसन्नम् ।।

ॐ भूर्भुवःस्वः ऋद्धि-सिद्धिसहितगणपतये नमः, ध्यायामि ।

आवाहनम्—

ॐ गजास्य ! गणनाथ त्वं सर्वविघ्नविनाशन । लम्बोदर त्रिनयन आगच्छ गणनायक ।। गणानां त्वेति मंत्रेण गणनाथं प्रपूजयेत्—

(१) तत्तत्प्रान्तेषु यथायथं योजनीयम् ।

ॐ गणानान्त्वा गणपतिᳬं हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिᳬं हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिᳬं हवामहे व्वसो मम आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् ॥

ऋद्धि स. ग. आवाहयामि, स्थापयामि। तदीशानकोणे- गौरीम्, आग्नेयकोणे कूर्मं, नैर्ऋत्ये अनन्तं, वायव्ये पृथ्वीमावाहयामि, स्थापयामि।

आसनम्—

ॐ पुरुषऽ एवेदᳬं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।

उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति। ॐग० आसनं-समर्पयामि

पाद्यम्—

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पुरूषः।

पादोस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि॥ ॐ ग. पाद्यं स०

अर्घ्यम्—

ॐ धामन्ते विश्वम्भुवनमधि श्रितमन्तः समुद्रे हृद्यन्तरायुषि।

अपामनीके समिथे य आभृतस्तमश्याम मधुमन्तंतऽऊर्मिम्॥

ॐ ग. अर्घ्यं स०

आचमनीयम्—

ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय त्वामवस्युराचके॥

ॐ ग. आचमनीयं स०

स्नानम्—

ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनीस्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद॥

ॐ ग० स्नानं स०।

पञ्चामृतस्नानम्—

ॐ पञ्च नद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः। सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित्॥

ॐ ग० पञ्चामृतस्नानं शुद्धोदकस्नानञ्च स०

गंधोदकस्नानम्—

ॐ गन्धर्वस्त्वा विश्वावसुः परिदधातु विश्वस्यारिष्टयै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिड ईडितः। ॐ ग० गंधोदकस्नानं स०

देवं गंधाक्षतैः संपूज्य [1]गणपत्यथर्वशीर्षेण गन्धमिश्रितजलेनाभिषेकं कुर्यात् ।
ॐ अमृताभिषेकोऽस्तु ।

शुद्धस्नानम्—

ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विनाः श्येतः श्येताक्षोऽरुणास्ते रुद्राय पशुपतये कर्णायामाऽअवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ॥ ॐ ग० शुद्धोदकस्नानं स० ।

वस्त्रम्—

ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म व्वरूथमासदत्स्वः ।
व्वासोऽअग्ने विश्वरूपꣳ संव्ययस्व व्विभावसो । ॐ ग० वस्त्रोपवस्त्रे स० । वस्त्रान्ते आचमनीयं स० ।

यज्ञोपवीतम्—

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात् ।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥
ॐ ग० यज्ञोपवीतं स० । तदन्ते आचमनीयं स० ।

गन्धः—

ॐ त्वाङ्गन्धर्वा अखनंस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः । त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत ॥ ॐ ग० गन्धं स० ।

अक्षताः—

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽ अधूषत । अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठयामती योजान्विन्द्रते हरी । ॐ ग० अक्षतान् स० ।

कुङ्कुमम्—

ॐ गंधद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥
ॐ ग० कुङ्कुमं स० ।

पुष्पाणि—

ॐ ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः । अश्वा इव सजित्वरीर्वीरूधः पारयिष्णवः ॥ ॐ ग० पुष्पमालां स० ।

---

(१) गणपत्यथर्वशीर्षं परिशिष्टे द्रष्टव्यम् ।

दूर्वाङ्कुराः—

ॐ काण्डात् काण्डात् प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि। एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च। ॐ ग० दूर्वां स०।

सिन्दूरम्—

ॐ सिंधोरिव प्राद्धनेशू घनासो व्वातप्रमियः पतयंति यह्वाः। घृतस्य धाराऽअरुषो न व्वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः। ॐ ग० सिन्दूरं स०।

परिमलद्रव्यम्—

ॐ अहिरिव भोगैः पर्य्येति बाहुञ्ज्या हेतिम्परिबाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्पुमान्पुमा छंसम्परिपातु विश्वतः। ॐ ग० परिमलद्रव्यं स०।

सुगन्धिद्रव्यम्—

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्। उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः॥ ॐ ग० सुगन्धिद्रव्यं स०।

धूपः—

ॐ धूरसि धूर्व्व धूर्व्वन्तं धूर्व्वतं योस्मान्धूर्वति तं धूर्व्वयव्वयन्धूर्व्वामः। देवानामसि वह्नितमछं सस्नितमम्पप्रीतमं जुष्टतमन्देवहूतमम्॥ ॐ ग० धूपमाघ्रापयामि।

दीपः—

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा। ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा॥ग० दीपं दर्शयामि। हस्तौ प्रक्षाल्य, नैवेद्यं पुरतो निधाय, गायत्र्या नैवेद्यं सम्प्रोक्ष्य, गंधपुष्पैः संपूज्य, धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य—

नैवेद्यम्—

ॐ अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः। प्रप्रदातारन्तारिष ऊर्ज्जन्नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे। ॐ ग० नैवेद्यं निवेदयामि।

ततो– ग्रासमुद्राः प्रदर्शयेत्– ॐ प्राणायस्वाहा । ॐ अपानायस्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा । ॐ उदानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा । पूर्वापोशनम् । नैवेद्यमध्ये-एला-लवङ्गकर्पूरादिसुवासितं पानीयं निवेदयामि । उत्तरापोशनं समर्पयामि । हस्तप्रक्षालनं स० । मुखप्रक्षालनं स० । आचमनीयं स० । करोद्वर्तनार्थे गंधं स० ।

ताम्बूलम्–

ॐ उतस्मास्यद्रवतस्तुरण्यतः पर्णन्नवेरनुवाति प्रगर्द्धिनः ।
श्येनस्येवध्रजतोऽअङ्कसम्परिदधिक्राव्णः सहोर्ज्जा तरित्रतः स्वाहा ।

मुखवासार्थे ॐ (एलालवङ्गक्रमुकयुतं) ताम्बूलं स० ।

पूगीफलम्–

ॐ याः फलिनीर्य्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः ।
बृहस्पति प्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्वꣳ हसः । ॐ ग० पूगीफलं स० ।

दक्षिणा–

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
सदाधार पृथिवीं द्यामुते माङ्कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।[1]

पूजासाद्गुण्यार्थं ॐ ग० दक्षिणां स० ।

आरार्त्तिकम्–

ततः कर्पूरारार्तिक्यं प्रज्वाल्य "ज्वालामालिन्यै नमः" इत्युच्चार्य गंधादिभिः संपूज्य आरार्तिकं कुर्यात्–

कर्पूरगौरं करुणावतारं, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम् ।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे, भवं भवानीसहितं नमामि ।।

ॐ आरात्रि पार्थिवꣳ रजः पितुरप्रायि धामभिः । दिवः सदाꣳसि बृहती वितिष्ठसऽआत्वेषं वर्त्तते तमः । ॐ ग० आ० स०

पुष्पाञ्जलिः–

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमान ꣳ सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्तिदेवाः ।।

---

(१) अथवा– ॐ यद्दत्तं यत्परादानं यत्पूर्तं याश्च दक्षिणाः । तदग्निर्वैश्वकर्मणः स्वर्देवेषु नो दधत् ।।

वक्रतुण्ड ! महाकाय, कोटिसूर्यसमप्रभ ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ।।

ततः पात्रे गन्धपुष्पाक्षतफलादीन्यादाय विशेषार्घ्यं समर्पयन् प्रार्थयेत्—

विघ्नेश्वराय वरदाय, सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।
नागाननाय सितसर्पविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ ! नमो नमस्ते ।। १ ।।
भक्तार्तिनाशनपराय गणेश्वराय,
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय ।।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय,
भक्तप्रपन्नवरदाय नमो नमस्ते ।। २ ।।
उन्मूल्य विघ्नान् भवतः समन्तात्,
भविष्यतां चापि जिहीर्षयेव ।
यो हस्तमान्दोलयति प्रकामं
स काममापूरयतु द्विपास्यः ।। ३ ।।
नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः ।
नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः ।। ४ ।।
वक्रतुण्ड ! महाकाय ! कोटिसूर्यसमप्रभ !
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ।। ५ ।।

ॐ तत्सदद्य कृतैतद्—गणेशपूजनविधेर्यन्न्यूनमतिरिक्तं तत्सर्वं भवतां ब्राह्मणानां वचनात् सर्वविधेः परिपूर्णतास्तु ।

अथ मातृकास्थापनम्—

गणेशः—

गजवक्त्र गणाध्यक्ष सर्वविघ्नविनाशन ।
लंबोदर त्रिनेत्राढ्य आगच्छ गणनायक ।।१।।

ॐ गणानां त्वा गणपति ᳪ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रिय-

T

पति ँ हवामहे निधीनां त्वा निधिपति ँ हवामहे व्वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्॥ १ ॥
ॐ गणपतये नमः। वायोश्चतुष्कमध्ये गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि।
गौरी–

हिमाद्रितनयां देवीं वरदां भैरवप्रियाम्।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम्॥१॥

आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः॥ पितरं च प्रयन्त्स्वः॥१॥ गौर्यै नमः, गौरीमावाहयामि स्थापयामि।
पद्मा–

सुवर्णाढ्यां पद्महस्तां विष्णोर्वक्षस्थले स्थिताम्।
त्रैलोक्यपूजितां देवीं पद्मामावाहयाम्यहम्॥२॥

ॐ हिरण्यरूपाऽउषसो विरोकऽउभाविद्राऽउदिथः सूर्यश्च॥ आरोहतं व्वरुणमित्रगर्त्तं ततश्चक्षाथामदितिं दितिं च मित्रोसि वरुणोसि॥२॥ पद्मायै नम, पद्मामावाहयामि स्था०।
शची–

उत्पलाक्षीं सुवदनां शशिकुंडलधारिणीम्।
देवराजप्रियां भद्रां शचीमावाहयाम्यहम्॥३॥

ॐ कदाचनस्तरीरसि नेन्द्रसश्चसि दाशुषे॥ उपोपेन्नु मघवन्भूयऽइन्नुतेदानं देवस्य पृच्यत आदित्येभ्यस्त्वा॥३॥
शच्यै नमः शचीमावाहयामि, स्थापयामि॥
मेधा–

वैवस्वतप्रफुल्लाभाममलेंदीवरस्थिताम्।
बुद्धिप्रसादिनीं सौम्यां मेधामावाहयाम्यहम्॥ ४॥

मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः॥ मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा॥ ४॥ मेधायै नमः मेधामावाहयामि। स्थापयामि।

T

सावित्री—

जगत्स्रष्ट्रीं जगद्धात्रीं पत्नीरूपेण संस्थिताम् ।
ॐकाराक्षीं भगवतीं सावित्रीमाह्वयाम्यहम् ।। ५ ।।

ॐ उपयामगृहीतोसि सुशर्मासि सुप्रति ष्ठानो वृहदुक्षाय नमः । विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य एष ते योनि र्विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः ।।५।।

सावित्र्यै नमः सावित्रीमावाहयामि, स्थापयामि ।

विजया—

दैत्यक्षयकरीं देवीं देवानां चाभयप्रदाम् ।
गीर्वाणवंदितां देवीं विजयामावाहयाम्यहम् ।।६।।

ॐ विज्यं धनुः कपर्दिनो विशल्यो बाणवाँ२ उत ।। अनेशन्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषंगधिः ।। ६ ।। विजयायै नमः विजया मावाहयामि, स्थापयामि ।

[redacted] जया—

विष्णुरुद्रार्कशक्रादिगीर्वाणेषु व्यवस्थिताम् ।
त्रैलोक्यवंदितां देवीं जयामावाहयाम्यहम् ।। ७ ।।

ॐ या ते रुद्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी ।। तयानस्तन्वा शंतमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ।।७।। जयायै नमः, जयामावाहयामि, स्थापयामि । कोष्ठेबाह्ये ।

देवसेना—

मयूरवाहनारूढ़ां शक्तिखड्गधनुर्द्धराम् ।
आवाहयेद्देवसेनां तारकासुरमर्दिनीम् ।। ८ ।।

ॐ देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवाना ँ रातिरभि नो निवर्तताम् ।। देवानाँ सख्यमुपसेदिमाव्वयन्देवा नऽआयुः प्रतिरंतु जीवसे ।।८।। देवसेनायै नमः देवसेनां आवाहयामि स्थापयामि ।

स्वधा—

कव्यमादाय सततं पितृभ्यो या प्रयच्छति ।
पितृलोकार्चितां देवीं स्वधामावाहयाम्यहम् ।।९।।

ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यःस्वधानमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधानमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यःस्वधानमः। अक्षन्नपितरोऽमीमदंतपितरोऽतीतृपंतपितरः पितरः शुन्धध्वम् ॥ ९ ॥

स्वधायै नमः, स्वधामावाहयामि स्थापयामि

स्वाहाः —

बाह्येऽग्निकोणेहविर्गृहीत्वा सततं देवेभ्यो या प्रयच्छति।
वह्निप्रिया तु सा स्वाहा समागच्छतु मेऽध्वरे ॥१०॥

ॐ स्वाहायज्ञं मनसः स्वाहोरोरंतरिक्षात्स्वाहा॥ द्यावापृथिवीभ्या ꣳ स्वाहा व्वातादारभे स्वाहा ॥ १० ॥ स्वाहायै नमः।

स्वाहामावाहयामि, स्थापयामि।

मातरः—

आवाहयाम्यहं मातॄः, सकला लोकपूजिताः।
सर्वकल्याणरूपिण्यो, वरदा दिव्यभूषणाः॥

ॐ आपोऽअस्मान्मातरः शुंधयंतु घृतेन नो घृतप्वः पुनंतु॥ विश्व ꣳ हिरिप्रम्प्रवहंति देवी रुदिदाभ्यः शुचिरापूतऽएमि। दीक्षातपसो स्तनूरसि तान्त्वा शिवाꣳशग्मामपरिदधे भद्रं वर्णं पुष्यन् ॥११॥

मातृभ्यो नमः। मातॄः आवाहयामि, स्थापयामि।

लोकमातरः—

आवाहयेल्लोकमातॄर्जगत्पालनसंस्थिताः।
शक्राद्यैर्वंदिताः देवीः स्तोत्रपाठाभिचारकैः॥ १२ ॥

ॐ स्वाहायज्ञं वरुणः। सुक्षत्रो भेषजं करत्॥ अतिछंदाऽइन्द्रियंबृहद्दषभोगौर्वयोदधुः॥ १२ ॥

लोकमातृभ्यो नमः, लोकमातॄः आवाहयामि, स्थापयामि।

धृतिः—

मनस्तुष्टिकरीं देवीं लोकानुग्रहकारिणीम्।
सर्वकामसमृद्ध्यर्थं धृतिमावाहयाम्यहम्॥ १३ ॥

ॐ यत्प्रज्ञानमुतचेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरंतरमृतं प्रजासु॥

T

यस्मान्नऽऋते किंचन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।। १३ ।।

धृत्यै नमः धृतिमावाहयामि, स्थापयामि ।

पुष्टिः—

प्रणतानां हि लोकेऽस्मिन्पुत्रपुष्टिसुखप्रदाम् ।
भक्तेभ्यश्चापि वरदां पुष्टिमावाहयाम्यहम् ।।१४।।

ॐ रयिश्चमे रायश्चमे पुष्टंचमे पुष्टिश्चमे व्विभुचमे प्रभुचमे ।। पूर्णंचमे पूर्णतरंचमे कुयवंचमे ऽक्षितंचमेन्नंचमे क्षुच्चमे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।।१४।। पुष्टयै नमः, पुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि ।

तुष्टिः—

आवाहयामि तां तुष्टिं सर्वलोकसुखप्रदाम् ।
संतोषभावनां देवीं रक्षणीयेऽध्वरे मम ।।१५।।

ॐ त्वष्टा तुरीपो ऽअद्भुतऽइन्द्राग्नी पुष्टिवर्द्धना ।। द्विपदाच्छंदऽइन्द्रियमुक्षागौर्न्नवयोदधुः ।। १५ ।। तुष्टयै नमः तुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि ।

कुलदेवी—

त्वमात्मा देहिनां देवि सर्वकामफलप्रदा ।
वंशरक्षणकर्त्री च आगच्छागच्छ मेऽध्वरे ।। १६ ।।

ॐ प्राणायस्वाहाऽपानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा चक्षुषेस्वाहा श्रोत्राय स्वाहा वाचे स्वाहा मनसे स्वाहा ।।१६।।

आत्मकुलदेवतायै नमः, आत्मकुलदेवतामावाहयामि, स्थापयामि

एवं प्रत्येकमावाहनस्थापने कुर्यात् । ततः सप्तघृतधारासु प्रथमत आरभ्य—

श्र्यादि-सप्तवसोर्धारास्थापनम्—

श्रीः—

ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्न्या वहो रात्रे पाश्र्वें नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणा मुम्मऽइषाण सर्व्वलोकम्मऽइषाण । ॐ श्रियै नमः । श्रियमावाहयामि, स्थापयामि ।

T

लक्ष्मीः—

ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ॥

ॐ लक्ष्म्यै नमः । लक्ष्मीमावाहयामि, स्थापयामि ।

धृतिः—

ॐ धृष्टिरस्यपाग्ने अग्निमामादं जहि निष्क्रव्याद छं सेधा देवयजं वह । ध्रुवमसि पृथिवींद छं ह ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनि सजातवन्युपदधामि भ्रातृव्यस्य वधाय । ॐ धृत्यै नमः, धृति०स्था० ।

मेधा—

ॐ यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते । तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा । ॐ मेधायै नमः, मेधामावा, स्था० ।

प्रज्ञा—

ॐ यत्प्रज्ञानमुतचेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।
यस्मान्न ऋते किंचन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।

ॐ प्रज्ञायै नमः, प्रज्ञामावा, स्था० ।

पुष्टिः—

ॐ रयिश्चमे रायश्चमे पुष्टंचमे पुष्टिश्चमे विभुचमे प्रभुचमे पूर्णंचमे पूर्णतरंचमे कुयवं च मेऽक्षितं च मेऽन्नंचमेक्षुच्चमे यज्ञेन कल्पन्ताम् । ॐ पुष्टयै नमः, पुष्टिमावा स्था० ।

सरस्वती—

ॐ पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञं वष्टु धियावसुः । ॐ सरस्वत्यै नमः, सरस्वतीमावा स्था० ।

ततस्तासां प्रतिष्ठां कुर्यात्—

ॐ तदस्तु मित्रवरुणातदग्ने शंयोरस्मभ्यमिदमस्तु शस्तम् ॥
अशीमहि गाधमुतप्रतिष्ठान्नमो दिवे बृहते सादनाय ॥ १ ॥

मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमंतनो त्वरिष्टं यज्ञछंसमिमं दधातु । विश्वेदेवास इहमादयन्तामों३ प्रतिष्ठ ॥२॥

T

एषवै प्रतिष्ठानाम यज्ञो यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवति ।। ३ ।।

ॐ गौर्यादिषोडशमातरः सगणेशाः (वसोर्धारासहिताः) श्रयादिसप्तघृतमातृकासहिताः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु ।

ततः पाद्यादीन् गृहीत्वा प्रथमत आरभ्य पृथक् पृथग् एकतंत्रेण वा गणपतिपूजनवत् पूजां कुर्यात् । ततः श्रीफलोपरि अक्षतपुष्पाणि निधाय, श्रीफलं देवताभिमुखं कृत्वा —

पत्रं पुष्पं फलं तोयं, रत्नानि विविधानि च ।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं, देहि मे वाञ्छितं फलम् ।।१।।
रूपं देहि जयं देहि, भाग्यं भगवति ! देहि मे ।
पुत्रान् देहि धनं देहि, सर्वान् कामांश्च देहि मे ।।२।।
फलेन फलितं सर्वं, त्रैलोक्यं सचराचरम् ।
फलस्यार्घप्रदानेन, पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ।।३।।

"श्रीफलेन एष वोऽर्घः"—इति सम्प्रार्थ्य श्रीफलं स्वाभिमुखं कृत्वा मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयेत् ।

तत आयुष्यमिति ऋचां त्रयं पठेत्—

ॐ आयुष्यं वर्च्चस्य ं रायस्पोषमौद्भिदम् । इद ं हिरण्यं वर्च्चस्व ज्जैत्रायाविशतादु माम् ।।१।।

न तद्रक्षा ं सि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमज ं ह्येतत् । यो बिभर्ति दाक्षायण ं हिरण्य ं स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ।। २ ।।

यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्य ं शतानीकाय सुमनस्यमानाः । तन्म आबध्नामि शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम् ।। ३ ।।

कृतस्य मातृकापूजनविधेर्यन्न्यूनमतिरिक्तं तत्सर्वं भवतां ब्राह्मणानां वचनात् श्रीगणेशाम्बिकयोः प्रसादात् सर्वविधेः परिपूर्णतास्तु ।

इति षोडशमातृका-सप्तघृतमातृकापूजनप्रयोगः ।

अथ नवग्रह-स्थापनम्

सूर्यः—

ॐ [1]आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥

ॐ सूर्याय नमः, सूर्यमावा. स्था०।

चन्द्रमाः—

ॐ इमं देवाऽअसपत्नꣳ सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय। इममसुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै व्विशऽएषवोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाꣳ राजा॥ ॐ चन्द्रमसे नमः, चन्द्रमसमावा. स्था०।

भौमः—

ॐ अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम्। अपाꣳ रेताꣳसि जिन्वति॥ ॐ भौमायनमः, भौममावा. स्था०।

बुधः—

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳसृजेथा-

---

१ सूर्यादिनवग्रहमन्त्राणाम्-ऋष्यादयोऽप्यवगन्तव्याः, यथा—

आकृष्णेनेत्यस्य हिरण्यस्तूपऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः सूर्यो देवता सूर्यपूजने सूर्यजपादौ च विनियोग.। इमंदेवा-इत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिरत्यष्टिच्छन्दः सोमो देवता सोमपूजनें विनियोगः। अग्निर्मूर्द्धा-इत्यस्य विरूपऋषिर्गायत्रीछन्दो भौमो देवता भौमपूजने विनियोगः। उद्बुध्यस्व-इत्यस्य परमेष्ठीऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दो बुधो देवता बुधपूजने विनियोगः। बृहस्पते-इत्यस्य गृत्समद ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दो बृहस्पतिर्देवता बृहस्पतिपूजने विनियोगः। अन्नात्परिस्रुत-इत्यस्याश्विसरस्वतीन्द्रा ऋषयोऽतिजगतीच्छन्दः शुक्रो देवता शुक्रपूजने विनियोगः। शन्नो देवीरित्यस्य दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिर्गायत्री छन्दः शनिर्देवता शनिपूजने विनियोगः। कया न-इत्यस्य वामदेव ऋषिर्गायत्रीछन्दो राहुर्देवता राहुपूजने विनियोगः। केतुं कृण्वन्-इत्यस्य मधुच्छन्द ऋषिर्गायत्रीच्छन्दः केतुर्देवता केतुपूजने विनियोगः।

T

मयञ्च । अस्मिन्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवायजमानश्च सीदत ॥ ॐ बुधाय नमः, बुधमावा. स्था० ।

बृहस्पतिः—

ॐ बृहस्पतेऽअति यदर्योऽअर्हाद्द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छवसऽऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणन्धेहि चित्रम् ॥

ॐ बृहस्पतयेनमः, बृहस्पतिमावा. स्थापयामि ।

शुक्रः—

ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ॥ ॐ शुक्राय नमः, शुक्रमावा. स्था० ।

शनिः—

ॐ शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये । शँय्योरभिस्रवन्तु नः । ॐ शनैश्चराय नमः, शनैश्चरमावा. स्था० ।

राहुः—

ॐ कया नश्चित्रऽआभुवदूती सदावृधः सखा । कया शचिष्ठया वृता ॥ ॐ राहवे नमः, राहुमावा. स्था० ।

केतुः—

ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्य्याऽपेशसे । समुषद्भिरजायथाः ॥ ॐ केतवे नमः केतुमावा. स्था० ।

ततो "मनोजूतिः…" इति मंत्रेण प्रतिष्ठां कृत्वा पूर्ववत् पूजां विधाय, 'यज्ञेन यज्ञ…' इति वैदिकमन्त्रेण—

'ग्रहा राज्यं प्रयच्छन्ति, ग्रहा राज्यं हरन्ति च ।
ग्रहैस्तु व्यापितं सर्वं, त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥

इति पठन् ग्रहराजेभ्यो मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयेत् । नमस्कुर्यात् ।

कृतस्य नवग्रहपूजनविधेर्यन्न्यूनमतिरिक्तं तत्सर्वं भवतां ब्राह्मणानां वचनात् श्रीगणेशाम्बिकयोः प्रसादात् सर्वविधेः परिपूर्णतास्तु ।

अथ पञ्चलोकपालस्थापनम्

ब्रह्मा—

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो व्वेन आवः । स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥

ॐ ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावा. स्थापयामि ।

विष्णुः—

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पा ७ सुरे स्वाहा ॥ ॐ विष्णवे नमः, विष्णुमावा. स्था० ।

शङ्करः—

ॐ नमः शंभवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च । शं० आ० स्था० ।

लक्ष्मीः—

ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुं म इषाण सर्वलोकंम इषाण ॥ ॐ लक्ष्म्यै नमः, लक्ष्मीमावा. स्था० ।

सरस्वती—

ॐ पञ्चनद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः । सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥ स० आ० स्था० ।

ततः स्थापितदेवानां यथाविधि पूजां विधाय पुष्पाञ्जलिं समर्प्य नमस्कुर्यात् । कृतस्य ब्रह्मादिपञ्चलोकपालपूजनविधेर्यन्न्यूनमधिकं तत्सर्वं भवतां ब्राह्मणानां वचनात् सर्वविधेः परिपूर्णतास्तु ।

अथ रुद्रकलशस्थापनम्

ॐ [1]भूरसि भूमिरस्यदितिरसि व्विश्वधाया व्विश्वस्यभुवनस्य-धर्त्री ॥ पृथिवींय्यच्छपृथिवीन्दृꣳ- हपृथिवीम्माहिꣳ- सीः ॥ १ ॥

इति मन्त्रेण भूमिं स्पृष्ट्वा,

१. अथवा—ॐ मही द्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञम्मिमिक्षताम् । पिपृतांनो भरीमभिः ।

T

ॐ धान्यमसि धिनुहि देवान्प्राणाय त्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा । दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धां देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोऽसि ।।

इति मन्त्रेण धान्याधारं कृत्वा,

ॐ आजिघ्रकलशंमह्यात्वाविशंत्विन्दवः ।। पुनरूर्जानिवर्त्तस्वसानः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वतीपुनर्म्माविशताद्रयिः ।।३।

इति मन्त्रेण कलशं स्थापयित्वा,

ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्य स्कंभसर्जनीस्त्थोव्वरुणस्यऋतसदन्यसिव्वरुणस्य ऋतसदनमसिव्वरुणस्यऋतसदनमासीद।४।

इति मन्त्रेण कलशे जलं प्रपूर्य,

ॐ याऽओषधीः पूर्वाजातादेवेभ्यस्त्रियुगंपुरा ।। मनैनु बभ्रूणामहर्ठ०शतं धामानिसप्तच ।।५।। इति मं० क० सर्वौषधीः प्रक्षिप्य,

ॐ अश्वत्थे वो निषदनम्पर्णो वोव्वसतिष्कृता ।। गोभाजऽइत्किलासथयत्सनवथपूरुषम् ।।६।। इति मन्त्रेण कलशे पञ्चपल्लवानि

ॐ काण्डात् काण्डात् प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि ।
एवानो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च ।।७।।

इति मन्त्रेण दूर्वाङ्कुरान् ।

ॐ स्योना पृथिवी भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः शर्म सप्रथाः ।।७।।

इति मन्त्रेण सप्तमृत्तिकाः

ॐ याः फलिनीर्य्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्चपुष्पिणीः ।। बृहस्पतिप्रसूतास्तानोमुञ्चन्त्वर्ठ०हसः ।।८।। इति मन्त्रेण पूगीफलम्

ॐ परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानि दाशुषे ।।९।।

इति मन्त्रेण पञ्चरत्नानि

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रेभूतस्यजातः पतिरेकआसीत् ।। सदाधारपृथिवींद्यामुतेमांकस्मैदेवाय हविषाव्विधेम ।।१०।।

इति मन्त्रेण दक्षिणा (मुद्रा) र्पणम्

ॐ पूर्णादर्विपरापत सुपूर्णा पुनरापत ।। वस्नेवव्विक्रीणाव-हाऽइषमूर्ज्जंठं०शतक्रतो ।।११।।

इति मन्त्रेण कलशोपरि तन्दुलपूरितं पूर्णपात्रं निधाय

ॐ श्रीश्चचते लक्ष्मीश्चव्वपत्क्न्या वहो रात्रे पाश्र्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्व्यात्तम् । इष्ष्णन्निषाण मुम्मइषाण सर्व्वलोकम्मऽ इषाण ।।१२।।

इति मन्त्रेण पूर्णपात्रोपरि श्रीफलं निधाय

ॐ सुजातो ज्ज्योतिषा सह शर्मव्वरूथमासदत्स्वः ।। व्वासोऽग्ने व्विश्वरूपठं०संव्व्ययस्वव्विभावसो ।।१३।।

इति मन्त्रेण श्रीफलं वस्त्रेण वेष्टयित्वा

ॐ असङ्ख्याता सहस्राणि ये रुद्रा अधिभूम्याम् । तेषांठं सहस्रयोजने वधन्वानि तन्मसि ।।

इति मन्त्रेण रुद्रकलशे असंख्यातरुद्रेभ्यो नमः । असंख्यातरुद्रान् आवाहयामि, स्थापयामि । ततो यथावत् सम्पूज्य, नमस्कुर्यात् ।

अथ आचार्यादिपाठकर्तृणां वरणम्

तत्रादौ यजमानः विप्रस्य दक्षिणचरणं प्रक्षालयेत् । तदा विप्रो-ब्रूयात्— "यत्फलं कपिलादाने, कार्त्तिक्यां ज्येष्ठपुष्करे । तत्फलं पाण्डवश्रेष्ठ ! विप्राणां पादशौचने । १ । ततः पादप्रक्षालनसामग्रीं पृथक् धृत्वा, हस्तौ प्रक्षाल्य सति संभवे अर्घमपि दद्यात् । तदा "आपस्थ युष्माभिः सर्वान्कामानवाप्नवानि ।" इति हस्तधृतमर्घं शिरसा-भिवन्द्य—

ॐ समुद्रं वः प्रहिणोम्मि स्वां योनिमभिगच्छत । अरिष्टा-स्माकं वीरा मापरासे चिमत्पयः ।। इति पठन् विप्रो भूमौ निनयेत् (प्रक्षिपेत्) । ततो यजमानः "नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये, सहस्रपादा-क्षिशिरोरुबाहवे । सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटियुगधारिणे नमः ।" इति मन्त्रं पठन् ब्राह्मणस्य तिलकं कुर्यात् । तदा विप्रपठनीयो मन्त्रः—

ॐ युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि ॥१॥ युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे शोणा धृष्णू नृवाहसा ॥२॥

ततो यजमानः ब्राह्मणस्य कङ्कणं बध्नीयात्। तदाविप्रपठनीयो मन्त्रः–

ॐ यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्यꣳ शतानीकाय सुमनस्यमानाः। तन्मऽआबध्नामि शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम्।

ततो यजमानः यज्ञोपवीत-पूगीफलाक्षतदक्षिणाः ब्राह्मणकरे समर्पयन् ब्रूयात्— "अमुकगोत्रम्, अमुकप्रवरम्, अमुकवेदस्यामुकशाखाध्यायिनम् अमुकशर्माणं ब्राह्मणम् अस्मिन् सार्धनवचण्डीपुरश्चरणकर्मणि सप्तशतीपाठकर्तृत्वेन आचार्यत्वेन च एभिर्द्रव्यैस्त्वां वृणे।

"वृतोऽस्मि"—इति आचार्यो ब्रूत्वा—

ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्। दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते। इति मन्त्रं पठेत्।

ततो यजमान आचार्यं वृत्वा प्रार्थयेत्—

आचार्यस्तु यथा स्वर्गे, शक्रादीनां बृहस्पतिः।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्, आचार्यो भव सुव्रत ॥

तदा आचार्यपठनीयो मन्त्रः—

ॐ बृहस्पतेअति यदर्योअर्हाद्द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्।

इत्थम् आचार्यादिनवब्राह्मणान् "सार्धनवचण्डीपुरश्चरणकर्मणि पूर्णपाठकर्तृत्वेन त्वामहं वृणे" इत्युक्त्वा पृथक् २ वृणुयात्।

दशमं ब्राह्मणं तु "सार्धनवचण्डीपुरश्चरणकर्मणि अर्द्धपाठकर्तृत्वेन त्वां वृणे"-इत्युक्त्वा वृणुयात्।

एकादशं ब्राह्मणं तु–यजुर्वेदीय-वाजसनेयिसंहितान्तर्गतैकषडङ्गरूद्रपाठकर्तृत्वेन त्वामहं वृणे" इत्युक्त्वा वृणुयात्। प्रार्थयेच्च-यथाविहितं कर्म कुरूध्वम्।

ततो वृतेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथाशक्ति आसन-पञ्चपात्रकुण्डलमुद्रिका-वासांसि तत्प्रत्याम्नायद्रव्यं वा सम्प्रदद्यात् ।

अथ प्रधानपूजनम्

तत्रादौ प्रधानपीठेऽष्टदलं कृत्वा, तन्मध्ये देवान् आवाह्य प्रपूजयेत् । तथाहि मध्यभागे—ॐ ब्रह्मणे नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ रूद्राय नमः ।

प्रथमे पूर्वदिक्पत्रे—ॐ अष्टवसुभ्यो नमः, ॐ एकादशरूद्रेभ्यो नमः, ॐ द्वादशादित्येभ्यो नमः, ॐ सपैतृकविश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः, ॐ पर्वतेभ्यो नमः ।

द्वितीयेऽग्निकोणपत्रे—ॐ गङ्गादिनदीभ्यो नमः, ॐ रैवन्ताय नमः ॐ गणपतये नमः, ॐ दुर्गायै नमः, ॐ वायवे नमः ।

तृतीये याम्यपत्रे—ॐ अन्तरिक्षाय नमः, ॐ अश्विभ्यां नमः, ॐ गन्धर्वेभ्यो नमः, ॐ नागेभ्यो नमः ।

चतुर्थे नैर्ऋत्यपत्रे—ॐ अप्सरोभ्यो नमः, ॐ तिर्यग्योनिभ्यो नमः, ॐ मनुष्येभ्यो नमः, ॐ राक्षसेभ्यो नमः, ॐ किन्नरेभ्यो नमः ।

पञ्चमे प्रतीचीपत्रे—ॐ कालाय नमः, ॐ महाकालाय नमः, ॐ प्रलयाय नमः, ॐ गौर्यादिमातृभ्यो नमः, ॐ अधिदेव-प्रत्यधिदेवसहितसूर्यादिग्रहेभ्यो नमः ।

षष्ठे वायव्यपत्रे—ॐ संवत्सरेभ्यो नमः, ॐ ऋतुभ्यो नमः, ॐ अयनाभ्यां नमः, ॐ मासेभ्यो नमः, ॐ पक्षाभ्यां नमः ।

सप्तम उदीचीपत्रे—ॐ तिथिभ्यो नमः, ॐ नक्षत्रेभ्यो नमः, ॐ योगेभ्यो नमः, ॐ करणेभ्यो नमः, ॐ सतारकध्रुवाय नमः ।

अष्टम-ईशानपत्रे—ॐ सप्तर्षिभ्यो नमः, ॐ जगदाधाराय नमः ॐ जगन्निर्मात्रे नमः, ॐ जगत्पालकाय नमः, ॐ जगत्स्वरूपिणे नमः ।

इति नाममन्त्रेण देवान् आवाह्य, बर्हिर्दिक्षु विदिक्षु इन्द्रादिदश-दिक्पालान् आवाहयेत् । तथाहि-पूर्वे ॐ इन्द्राय नमः, आग्नेय्याम् अग्नये नमः, दक्षिणस्यां यमाय नमः, नैर्ऋत्यां निर्ऋतये नमः, पश्चिमायां वरुणाय

नमः, वायव्यां वायवे नमः, उदीच्यां [१]सोमाय नमः, ईशाने शङ्कराय नमः, ऊर्ध्वं ब्रह्मणे नमः, (पूर्वेशानयोर्मध्ये), अधः अनन्ताय नमः (निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये) एवमष्टदलमण्डलस्य देवान् (वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अंकुशगदा-त्रिशूल-कमण्डलु चक्रादि) सायुधान् सपरिकरान् आवाह्य पूजयेत् ।

ततोऽष्टदलमण्डलस्य मध्ये कलशस्थापनोक्तविधिना धान्यपुञ्जोपरि कलशं संस्थाप्य तत्र वरुणमावाह्य, तदुपरि दिव्यसिंहासनोपरि [२]भवानीशङ्करौ सम्पूजयेत् ।

अथ मूर्त्योः प्राणप्रतिष्ठाप्रयोगः—

स्वर्णादिना प्रधानप्रतिमां निर्माय, अग्न्युत्तारणं कृत्वा तद्यथा मूर्त्ती घृतेनाभ्यज्य वस्त्रेणावेष्टय दुग्धधाराजलं पातयन् मन्त्रान् पठेत्—

ॐ समुद्रस्य त्वावकयाग्ने परिव्ययामसि ।। पावकोअस्मभ्यर्ठ०शिवोभव ।।१।।

हिमस्य त्वा जरायुणाग्ने परिव्ययामसि । पावकोअस्मभ्य ठं० शिवोभव ।।२।।

उपज्मन्नुप वेतसेऽवतर नदीष्वा ।। अग्ने पित्तमपामसि मण्डूकि ताभिरागहि ।। सेमंनोयज्ञस्पावकवर्णर्ठ०शिवंकृधि ।।३।।

अपामिदंन्ययनर्ठ०समुद्रस्य निवेशनम् ।। अन्यांस्तेअस्मत्तपन्तुहेतयः पावकोअस्मभ्यर्ठ०शिवो भव ।।४।।

अग्नेपावकरोचिषा मन्द्रया देव जिह्वया ।। आदेवान्वक्षियक्षिच ।।५।।

स नः पावक दीदिवोऽग्नेदेवाँ २ इहावह । उपयज्ञर्ठ० हविश्च नः ।।६।।

पावकया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामन्रुरुच उषसो न भानुना ।।

(१) केचन कुबेरम् । (२) सतिसंभवे सुवर्णादिनिर्मितायां मूर्त्तौ, स्फटिकलिङ्गे नर्मदालिङ्गे वा शङ्करं, मूर्त्तौ भवानीञ्च, तदभावे कुशोपरि चित्रोपरि वा भवानीशङ्करयोरावाहनं विदध्यात् ।

तूर्वन्न यामन्नेतशस्य नू रणग्रायो घृणेनततृषाणोग्रजरः ।। ७ ।।

नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्ते ग्रस्त्वर्चिषे ।। ग्रन्यांस्तेग्रस्मत्तपन्तुहेतयः पावकोग्रस्मभ्यठं० शिवोभव ।। ८ ।।

इति ग्रग्न्युत्तारणम् ।

ततो जलेन प्रक्षाल्य प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात् ।

ॐ ग्रस्य श्री प्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि परा प्राणशक्तिर्देवता ॐ ग्रां बीजं ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकं यं रं लं वं शं षं सं हं हं सः–भवानीशङ्करयोर्मूर्त्तिप्रतिष्ठापने विनियोगः ।

ॐ ग्रां ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हं सः–भवानीशङ्करयोः प्राणा इहागत्य सुखेन चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।

ॐ ग्रां ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हं सः–भवानीशङ्करयोर्जीव इहागत्य सुखेन चिरं तिष्ठतु स्वाहा ।

ॐ ग्रां ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हं सः–भवानीशङ्करयोः सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणिपादपायूपस्थानि इहागत्य सुखेन चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।

ॐ ग्रस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु ग्रस्यै प्राणाः क्षरन्तु च ।
ग्रस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति न कश्चन ।।

ॐ एषवै प्रतिष्ठा नाम यज्ञो यत्रैतेन यजन्ते । सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवतु ।

ततो गन्धादिपञ्चोपचारान्दत्वा षोडशसंस्कारसिद्धये षोडशप्रणवावृत्तीः कृत्वा भवानीशङ्करयोः १६ संस्काराः सम्पद्यन्तामिति वदेत् ।

ध्यानम्—

मन्दारमालाकुलितालकायै, कपालमालाङ्कितशेखराय ।
दिव्याम्बरायै च दिगम्बराय, नमः शिवायै च नमः शिवाय ।।

ॐ भवानीशङ्कराभ्यां नमः । ध्यायामि ।

ग्रावाहनम्—

ॐ नमस्ते रुद्र मन्यवउतो तइषवे नमः ।।
बाहुभ्यामुत ते नम ।।

T

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो ममावह ।।
ॐ भवानीशङ्कराभ्यां नमः, भवानीशङ्करौ आवाहनं परिकल्पयामि ।

आसनम्—

ॐ या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी ।
तया नस्तन्न्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ।।
ॐ तांमऽआवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ।।
ॐ भ. शङ्कराभ्यामासनं समर्पयामि ।

पाद्यम्—

ॐ यामिषुङ्गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे ।
शिवाङ्गिरित्रताङ्कुरु मा हिꣳसीः पुरुषञ्जगत् ।।
ॐ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मादेवीजुषताम् ।।
ॐ भ. श. पाद्यं समर्पयामि ।

अर्घ्यम्—

ॐ शिवेन व्वचसा त्वा गिरिशाऽच्छाव्वदामसि ।
यथा नः सर्व्वमिज्जगदयक्ष्मꣳ सुमनसाऽअसत् ।।
ॐ कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं । तृप्तां तर्पयन्तीम् ।
पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ।।
ॐ भ. श. अर्घ्यं स० ।

आचमनीयम्—

ॐ अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् ।
अहीँश्च सर्व्वाञ्जम्भयन्त्सर्व्वाश्च यातुधान्योधराचीः परासुव ।।
चद्रां प्रभासां यशसा ज्वलंतीं श्रियं लोकेदेवजुष्टामुदाराम् ।

तां पद्मनेमिं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ।।

ॐ भ. श, आचमनीयं स० ।

स्नानम्—

ॐ असौ यस्ताम्रोऽअरुणऽउतबभ्रुः सुमङ्गलः ।

ये चैनꣳ रुद्राऽअभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशो वैषा-

ꣳ हेडऽईमहे ।।

ॐ आदित्यवर्णे तपसोधिजातो वनस्पतिस्तववृक्षोऽथबिल्वः ।

तस्य फलानि तपसानुदन्तु मायान्तरायाश्चबाह्याऽअलक्ष्मीः ।।

ॐ भ. श. जलेन स्नानं स० ।

दुग्धस्नानम्—

ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः ।

पयस्वतीः प्रदिश सन्तु मह्यम् ।। ॐ भ. श. दुग्धस्नानं स० ।

ततः शुद्धोदकस्नानम् आचमनीयं च स० । एवमग्रेऽपि प्रतिस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानमाचमनीयञ्च समर्पणीयम् ।

दधिस्नानम्—

ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ।

सुरभि नो मुखाकरत्प्रण आयूꣳषितारिषत् ।।

ॐ भ. श. दधिस्नानं स० ।

घृतस्नानम्—

ॐ घृतं घृतपावानः पिबत वसां वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रदिश आदिशो विदिश उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।। ॐ भ. श. घृतस्नानं स० ।

मधुस्नानम्—

ॐ मधुव्वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः । माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ।।

मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳ रजः । मधु द्यौरस्तु नः पिता ।। मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँऽअस्तु सूर्यः । माध्वीर्गावो भवन्तु नः ।। ॐ भ. श. मधुस्नानं स० ।

T

शर्करास्नानम्—

ॐ अपा ꣳ रसमुद्वयसꣳसूर्ये सन्त ꣳ समाहितम् । अपाꣳ रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥

ॐ भ. श. शर्करास्नानं स० ।

पञ्चामृतस्नानम्—

ॐ पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः । सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥ ॐ भ. श. पञ्चामृतस्नानं स० ।

गन्धोदकस्नानम्—

ॐ गन्धर्वस्त्वा विश्वावसुः परिदधातु विश्वस्यारिष्टचै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिड ईडितः ।

ॐ भ०श० गन्धोदकस्नानं स० ।

उद्वर्तनस्नानम्—

ॐ अꣳशुना तेऽअꣳ शुः पृच्यतां परुषा परुः । गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसोऽअच्युतः ॥

ॐ भ०श० उद्वर्तनस्नानं स० । सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्प्य, निर्माल्यमुत्तरे विसृज्य, रुद्राथर्वशीर्षेण देव्यथर्वशीर्षेण च भवानीशङ्करौ गन्धमिश्रितजलेन अभिषिञ्चेत्, तद्यथा—

अभिषेकः—

अथ शिवाथर्वशीर्षम्

शिरउपनिषत्

ॐ देवा ह वै स्वर्गलोकमायंस्ते रुद्रमपृच्छन् को भवानिति । सोऽब्रवीदहमेकः प्रथममासोद्वर्तामि च भविष्यामि च नान्यः कश्चिन्मत्तो व्यतिरिक्त इति । सोऽन्तरादन्तरं प्राविशद्दिशश्चान्तरं प्राविशत्सोऽहं नित्यानित्यो व्यक्ताव्यक्तो ब्रह्माब्रह्माहं प्राञ्चः प्रत्यञ्चोहं दक्षिणाञ्च उदञ्चोऽहमधश्चोर्ध्वंश्चाहं दिशश्च प्रतिदिशश्चाहं पुमानपुमान् स्त्रियश्चाहं सावित्र्यहं गायत्र्यहं त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप् चाऽहं छन्दोऽहं सत्योऽहं गार्हपत्यो दक्षिणाग्निराहवनीयोऽहं गौरहं गौर्यहमृगहं यजुरहं सामाहमथर्वाङ्गिरसोऽहं ज्येष्ठोऽहं

श्रेष्ठोहं वरिष्ठोऽहमापोहं तेजोऽहं गुह्योऽहमरण्योऽहमक्षरमहं क्षरमहं पुष्कर-महं पवित्रमहमुग्रञ्च बलिश्च पुरस्ताज्ज्योतिरित्यहमेव सर्वेभ्यो मामेव स सर्वः समाप्नोति मां वेद स देवान्वेद सर्वांश्च वेदान् साङ्गानपि ब्रह्म ब्राह्मणैश्च गां गोभिर्ब्राह्मणान् ब्राह्मणेन हविर्हविषा आयुरायुषा सत्यं सत्येन धर्मेण धर्मं तर्पयामि स्वेन तेजसा । ततो ह वै ते देवा रुद्रमपृच्छन् ते देवा रुद्रम-पश्यन् ते देवा रुद्रमध्यायन् ते देवा ऊर्ध्वबाहवो रुद्रं स्तुवन्ति ॥१॥ ॐ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च ब्रह्मा तस्मै वै नमो नमः । १ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च विष्णुस्तस्मै० । २ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च स्कन्द-स्तस्मै० । ३ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्चेन्द्रस्तस्मै० । ४ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्चाग्निस्तस्मै० । ५ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च वायुस्त-स्मै० । ६ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च सूर्यस्तस्मै० । ७ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च सोमस्तस्मै० । ८ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् येऽष्टौ ग्रहास्त-स्मै० । ९ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् ये चाष्टौ प्रतिग्रहास्तस्मै० । १० ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च भूस्तस्मै० । ११ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च भुवस्तस्मै० । १२ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च स्वस्तस्मै० । १३ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च महस्तस्मै० । १४ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् या च पृथिवी तस्मै० । १५ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्चान्तरिक्षं तस्मै० । १६ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् या च द्यौस्तस्मै० । १७ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् याश्चापस्तस्मै० । १८ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च तेजस्तस्मै० । १९ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च कालस्तस्मै० । २० ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च यमस्तस्मै० । २१ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च मृत्युस्तस्मै० । २२ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्चामृतं तस्मै० । २३ ॥ यो वै रुद्र स भगवान् यच्चाकाशं तस्मै० । २४ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च विश्वं तस्मै० । २५ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च स्थूलं तस्मै० । २६ ॥ यो वै रुद्रः सः भगवान् यच्च सूक्ष्मं तस्मै० । २७ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च शुक्लं तस्मै० । २८ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च कृष्णं तस्मै. ।२९॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च कृत्स्नं तस्मै ।३०॥ यो वै रुद्रः स भगवान्

T

यच्च सत्यं तस्मै० ।३१।। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च सर्वं तस्मै० ।३२।२।। भूस्ते आदिर्मध्यं भुवस्ते स्वस्ते शीर्षं विश्वरूपोऽसि ब्रह्मैकस्त्वं द्विधा त्रिधा वृद्धिस्त्वं शान्तिस्त्वं पुष्टिस्त्वं हुतमहुतं दत्तमदत्तं सर्वमसर्वं विश्वमविश्वं कृतमकृतं परमपरं परायणञ्च त्वम् । अपामसोममममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान् । किं नूनमस्मान् कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृतं मर्त्यस्य सोमसूर्यपुरस्तात्सूक्ष्मः पुरुषः । सर्वं जगद्धितं वा एतदक्षरं प्राजापत्यं सौम्यं सूक्ष्मं पुरुषं ग्राह्यमग्राह्येण भावं भावेन सौम्यं सौम्येन सूक्ष्मं सूक्ष्मेण वायव्यं वायव्येन ग्रसति तस्मै महाग्रासाय वै नमो नमः । हृदिस्था देवताः सर्वा हृदि प्राणाः प्रतिष्ठिताः । हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः । तस्योत्तरतः शिरो दक्षिणतः पादौ य उत्तरतः स ओङ्कारः य ओङ्कारः स प्रणवः यः प्रणवः स सर्वव्यापी यः सर्वव्यापी सोऽनन्तः योऽनन्तस्तत्तारं यत्तारं तच्छुक्लं यच्छुक्लं तत्सूक्ष्मं यत्सूक्ष्मं तद्वैद्युतं यद्वैद्युतं तत्परं ब्रह्म यत् परं ब्रह्म स एकः य एकः स रुद्रः यो रुद्रः स ईशानः य ईशानः स भगवान् महेश्वरः । ३ ।। अथ कस्मादुच्यते ओङ्कारः । यस्मादुच्चार्यमाण एव प्राणानूर्ध्वमुत्क्रामयति तस्मादुच्यते ओङ्कारः । अथ कस्मादुच्यते प्रणवः यस्मादुच्चार्यमाणा एव ऋग्यजुः सामाथर्वाङ्गिरसं ब्रह्म ब्राह्मणेभ्यः प्रणामयति नामयति च तस्मादुच्यते प्रणवः । अथ कस्मादुच्यते सर्वव्यापी यस्मादुच्चार्यमाण एव यथा स्नेहेन पललपिण्डमिव शान्तरूपमोतप्रोतमनुप्राप्तो व्यतिषक्तश्च तस्मादुच्यते सर्वव्यापी । अथ कस्मादुच्यतेऽनन्तः यस्मादुच्चार्यमाण एव तिर्यगूर्ध्वमधस्ताच्चास्यान्तो नोपलभ्यते तस्मादुच्यतेऽनन्तः । अथ कस्मादुच्यते तारं यस्मादुच्चार्यमाण एव गर्भजन्मव्याधिजरामरणसंसारमहाभयात्तारयति त्रायते च तस्मादुच्यते तारम् । अथ कस्मादुच्यते शुक्लं यस्मादुच्चार्यमाण एव क्लन्दते क्लामयति च तस्मादुच्यते शुक्लम् । अथ कस्मादुच्यते सूक्ष्मं यस्मादुच्चार्यमाण एव सूक्ष्मो भूत्वा शरीराण्यधितिष्ठति सर्वाणि चाङ्गान्यभिमृश्यति तस्मादुच्यते सूक्ष्मम् । अथ कस्मादुच्यते वैद्युतम् । यस्मादुच्चार्यमाण एव व्यक्ते महति तमसि द्योतयति तस्मादुच्यते वैद्युतम् । अथ कस्मादुच्यते परं ब्रह्म यस्मात् परमपरं परायणञ्च

T

बृहद्बृहत्या बृंहयति तस्मादुच्यते परं ब्रह्म। अथ कस्मादुच्यते एकः यः सर्वान् प्राणान् सम्भक्ष्य सम्भक्षणेनाजः संसृजति विसृजति तीर्थमेके व्रजन्ति तीर्थमेके दक्षिणाः प्रत्यञ्च उदञ्चः प्राञ्चोऽभिव्रजन्त्येके तेषां सर्वेषामिह सङ्गतिः साकं स एकोऽभूदन्तश्चरति प्रजानां तस्मादुच्यते एकः। अथ कस्मादुच्यते रुद्रः यस्मादृषिभिर्नान्यैर्भक्तैर्द्रुतमस्य रूपमुपलभ्यते तस्मादुच्यते रुद्रः। अथकस्मादुच्यते ईशानःयः सर्वान्देवानीशते ईशानीभिर्जननीभिश्च शक्तिभिः। अभित्वा शूर नोनुमो दुग्धा इव धेनवः। ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुष इति तस्मादुच्यते ईशानः। अथ कस्मादुच्यते भगवान् महेश्वरः यस्माद्भक्तान् ज्ञानेन भजत्यनुगृह्णाति च वाचं संसृजति विसृजति च सर्वान् भावान्परित्यज्यात्मज्ञानेन योगैश्वर्येण महति महीयते तस्मादुच्यते भगवान् महेश्वरः। तदेतद्रुद्रचरितम् ।४।। एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वः पूर्वो ह जातः स उ गर्भे अन्तः। स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः। एको रुद्रो न द्वितीयाय तस्मै य इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः। प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति चान्तकाले संसृज्य विश्वाभुवनानि गोप्ता।। यो योनिं योनिमधितिष्ठत्येको येनेदं सर्वं विचरति सर्वम्। तमीशानं वरदं देवमीड्यं निचाय्येमां शान्तिमत्यन्तमेति। क्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्या सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे। रुद्रमेकत्वमाहुः शाश्वतं वै पुराणमिषमूर्जेण पशवोनुनामयन्तं मृत्युपाशान्। तदेतेनात्मन्नेतेनार्धचतुर्थेन मात्रेण शान्तिं संसृजति पशुपाशविमोक्षणं या सा प्रथमा मात्रा ब्रह्मदेवत्या रक्ता वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेद् ब्रह्मपदम्। या सा द्वितीया मात्रा विष्णुदेवत्या कृष्णवर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेद्वैष्णवं पदम्। या सा तृतीया मात्रा ईशानदेवत्या कपिला वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेदैशानं पदम्। या सार्धच्चतुर्थी मात्रा सर्वदेवत्याऽव्यक्तीभूता खं विचरति शुद्धा स्फटिकसन्निभा वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेत्पदमनामयम्। तदेतदुपासीत मुनयो वाग्वदन्ति न तस्य ग्रहणमयं पन्था विहित उत्तरेण येन देवा यान्ति येन पितरो येन ऋषयः परमपरं परायणं चेति। वालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये विश्वं देवं जातरूपं वरेण्यम्। तमात्मस्थं ये नु पश्यन्ति

धीरास्तेषां शान्तिर्भवति नेतरेषाम् । यस्मिन् क्रोधं याञ्च तृष्णां क्षमाञ्चाक्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलं । बुद्धया सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे रुद्रमेकत्वमाहुः । रुद्रो हि शाश्वतेन वै पुराणेनेषमूर्जेण तपसा नियन्ताग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्वं ह वा इदं भस्म मन एतानि चक्षूंषि यस्मादव्रतमिदं पाशुपतं यद्भस्म नाङ्गानि संस्पृशेत् तस्माद् ब्रह्म तदेतत्पाशुपतं पशुपाशविमोक्षणाय । ५ ।। योऽग्नौ रुद्रो योऽप्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध आविवेश । य इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय नमोऽस्त्वग्नये । यो रुद्रोऽग्नौ यो रुद्रोऽप्स्वन्तर्यो रुद्र ओषधीर्वीरुध आविवेश । यो रुद्र इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय वै नमो नमः । यो रुद्रोऽप्सु यो रुद्र औषधीषु यो रुद्रो वनस्पतिषु । येन रुद्रेण जगदूर्ध्वं धारितं पृथिवी द्विधा त्रिधा धर्त्ता धारिता नागा येऽन्तरिक्षे तस्मै रुद्राय वै नमो नमः । मूर्धानमस्य संसेव्याप्यथर्वा हृदयञ्च यत् । मस्तिष्कादूर्ध्वं प्रेरयत्यवमानोऽधिशीर्षतः । तद्वा अथर्वणः शिरो देवकोशः समुज्झितः । तत् प्राणोऽभिरक्षति शिरोऽन्तमथो मनः । न च दिवो देवजनेन गुप्ता न चान्तरिक्षाणि न च भूम इमाः । यस्मिन्निदं सर्वमोतप्रोतं तस्मादन्यन्न परं किञ्चनास्ति । न तस्मात्पूर्वं न परं तदस्ति न भूतं नोत भव्यं यदासीत् । सहस्रपादेकमूर्ध्ना व्याप्तं स एवेदमावरीवर्ति भूतम् । अक्षरात् सञ्जायते कालः कालाद् व्यापक उच्यते । व्यापको हि भगवान् रुद्रो भोगायमानो यदा शेते रुद्रस्तदा संहार्यते प्रजाः । उच्छ्वसिते तमो भवति तमस आपोऽप्स्वङ्गुल्या मथिते मथितं शिशिरे शिशिरं मथ्यमानं फेनं भवति फेनादण्डं भवत्यण्डाद् ब्रह्मा भवति ब्रह्मणो वायुः वायोरोङ्कारः ओङ्कारात्सावित्री सावित्र्या गायत्री गायत्र्या लोका भवन्ति । अर्चयन्ति तपः सत्यं मधु क्षरन्ति यद्ध्रुवम् । एतद्धि परमं तपः । आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरों नम इति ।। ६ ।। य इदमथर्वशिरो ब्राह्मणोऽधीते । अश्रोत्रियः श्रोत्रियो भवति । अनुपनीत उपनीतो भवति । सोऽग्निपूतो भवति । स वायुपूतो भवति । स सूर्यपूतो भवति । स सोमपूतो भवति । स सत्यपूतो भवति । स सर्वेर्देवैर्ज्ञातो भवति ।

स सर्वैर्वेदैरनुध्यातो भवति । स सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति । तेन सर्वैः क्रतुभिरिष्टं भवति । गायत्र्याः षष्टिसहस्राणि जप्तानि भवन्ति । प्रणवानामयुतं जप्तं भवति । स चक्षुषः पंक्ति पुनाति । आसप्तमात् पुरुषयुगान्पुनातीत्याह भगवानथर्वशिरः सकृज्जप्त्वैव शुचिः स पूतः कर्मण्यो भवति । द्वितीयं जप्त्वा गणाधिपत्यमवाप्नोति तृतीयं जप्त्वैवमेवानुप्रविशत्यों सत्यमों सत्यमों सत्यम् ।। इत्यथर्ववेदे शिवाथर्वशीर्षम् ।

श्रीदेव्यथर्वशीर्षम्

ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवीति ।।१।।

साब्रवीत्—अहं ब्रह्मस्वरूपिणी । मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत् । शून्यं चाशून्यं च ।।२।।

अहमानन्दानानन्दौ । अहं विज्ञानाविज्ञाने । अहं बह्माब्रह्मणी वेदितव्ये । अहं पञ्चभूतान्यपञ्चभूतानि । अहमखिलं जगत् ।।३।।

वेदोऽहमवेदोऽहम् । विद्याहमविद्याहम् । अजाहमनजाहम् । अधश्चोर्ध्वं च तिर्यक्चाहम् ।।४।।

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि । अहमादित्यैरुत विश्वदेवैः । अहं मित्रावरुणावुभौ विभर्मि । अहमिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ ।।५।।

अहं सोमं त्वष्टारं पूषणं भगं दधामि । अहं विष्णुमुरुक्रमं ब्रह्माणमुत प्रजापतिं दधामि ।।६।।

अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते । अहं राष्ट्री सङ्गमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् । अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे । य एवं वेद । स दैवीं सम्पदमाप्नोति ।।७।।

ते देवा अब्रुवन्—नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ।।८।।
तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं, वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टाम् ।
दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्यामहेऽसुरान्नाशयित्र्यै ते नमः ।।९।।
देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना, धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ।।१०।।

कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कन्दमातरम् ।
सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवाम् ॥११॥
महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥१२॥
अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव ।
तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः ॥१३॥
कामो योनिः कमला वज्रपाणिर्गुहा हसा मातरिश्वाभ्रमिन्द्रः ।
पुनर्गुहा सकला मायया च पुरूच्यैषा विश्वमातादिविद्योम् ॥१४॥

एषाऽऽत्मशक्तिः । एषा विश्वमोहिनी । पाशाङ्कुशधनुर्बाणधरा । एषा श्रीमहाविद्या । य एवं वेद स शोकं तरति ॥१५॥

नमस्ते अस्तु भगवति मातरस्मान् पाहि सर्वतः ॥१६॥

सैषाष्टौ वसवः । सैषैकादश रुद्राः सैषा द्वादशादित्याः । सैषा विश्वेदेवाः सोमपा असोमपाश्च । सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचा यक्षाः सिद्धाः । सैषा सत्त्वरजस्तमांसि । सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपिणी । सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः । सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतींषि । कलाकाष्ठादिकालरूपिणी । तामहं प्रणौमि नित्यम् ॥

पापापहारिणीं देवीं भुक्तिमुक्तिप्रदायिनीम् ।
अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां शिवदां शिवाम् ॥१७॥
वियदीकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम् ।
अर्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् ॥१८॥
एवमेकाक्षरं ब्रह्म यतयः शुद्धचेतसः ।
ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः ॥१९॥
वाङ्माया ब्रह्मसूस्तस्मात् षष्ठं वक्त्रसमन्वितम् ।
सूर्योऽवामश्रोत्रबिन्दुसंयुक्तष्टात्तृतीयकः ।
नारायणेन संमिश्रो वायुश्चाधरयुक् ततः ।
विच्चे नवार्णकोऽर्णः स्यान्महदानन्ददायकः ॥२०॥
हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम् ।
पाशाङ्कुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम् ।

त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुघां भजे ॥२१॥
नमामि त्वां महादेवीं महाभयविनाशिनीम् ।
महादुर्गप्रशमनीं महाकारुण्यरूपिणीम् ॥२२॥

यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया । यस्या अन्तो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनन्ता । यस्या लक्ष्यं नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्या । यस्या जननं नोपलभ्यते तस्मादुच्यते अजा । एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका । एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यते नैका । अत एवोच्यते अज्ञेयानन्तालक्ष्याजैका नैकेति ॥२३॥

मन्त्राणां मातृका देवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी ।
ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी ॥
यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्त्तिता ।
तां दुर्गां दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीम् ॥
नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम् ॥

इदमथर्वशीर्षं योऽधीते स पञ्चाथर्वशीर्षजपफलमाप्नोति । इदमथर्वशीर्षमज्ञात्वा योऽर्चां स्थापयति । शतलक्षं प्रजप्त्वापि सोऽर्चासिद्धिं न विन्दति । शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः । दशवारं पठेद्यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते । महादुर्गाणि तरति महादेव्याः प्रसादतः ॥ २६ ॥ सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायंप्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति । निशीथे तुरीयसन्ध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति । नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा देवतासान्निध्यं भवति । प्राणप्रतिष्ठायां जप्त्वा प्राणानां प्रतिष्ठा भवति । भौमाश्विन्यां महादेवीसन्निधौ जप्त्वा महामृत्युं तरति स महामृत्युं तरति । य एवं वेद इत्युपनिषत् ॥ इति देव्यथर्वशीर्षम् ॥ अमृताभिषेकोऽस्तु ।[1]

शुद्धस्नानम्—

ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विनाः श्येतः श्येताक्षोऽरूणस्ते रूद्राय पशुपतये कर्णायामाऽअवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ॥ ॐ भ.श. शुद्धस्नानं स० ।

(१) समयाभावे तु केवलमष्टोत्तरशतनवार्णमन्त्रैरेव भवानीशङ्करौ अभिषिञ्चेत् ।

वस्त्रोपवस्त्रे—

ॐ असौ योऽवसर्प्पति नीलग्ग्रीवो व्विलोहितः ।
उतैनङ्गोपाऽअदृश्रन्नदृश्रन्नुदहाय्र्यं सदृष्टोमृडयाति नः ।।
ॐ उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतो सुराष्ट्रेऽस्मिन्कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ।।

ॐ भ. श. वस्त्रोपवस्त्रे स० । वस्त्रान्ते आचमनीयं स० ।

यज्ञोपवीतम्—

ॐ नमोस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ।
अथो येऽअस्य सत्त्वानोहन्तेभ्योऽकरन्नमः ।।
ॐ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात् ।।

ॐ भ. श. यज्ञोपवीतं स० । यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं स० ।

गन्धः—

ॐ प्रमुञ्च धन्न्वनस्त्वमुभयोरात्न्र्योज्ज्यीम् ।
याश्चच ते हस्तऽइषवः परा ता भगवोव्वप ।।
ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।।

ॐ भ. श. गन्धं स० ।

अक्षताः—

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽअधूषत । अस्तोषत स्वभानवो विप्रानविष्ठयामती योजान्विन्द्रते हरी ।।

ॐ भ. श. अक्षतान् स० ।

पुष्पाणि—

ॐ विज्ज्यन्धनुः कपर्द्दिनो व्विशल्ल्यो बाणवाँ२ऽउत ।
अन्नेशन्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषङ्गधिः ।।
ॐ मनसः काममकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ।।

ॐ भ० श० पुष्पमालां स० ।

T

बिल्वपत्राणि—

ॐ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो वर्मिणे च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च ।।

ॐ भ० श० विल्वपत्राणि स० ।

दूर्वाङ्कुराः—

ॐ काण्डात् काण्डात् प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि । एवानो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च ।। ॐ भ०श० दूर्वाङ्कुरान् स०

सिन्दूरम्—

ॐ सिंधोरिव प्राध्वने शूघनासो व्वातप्रमियः पतयंति-यह्वाः । घृतस्य धाराऽअरुषो न व्वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः । ॐ भ० श० सिन्दूरम् ।

कज्जलम्—

ॐ वृत्रस्यासि कनीनकश्चक्षुर्दाऽअसि चक्षुर्मे देहि ।

ॐ भ० श० कज्जलम् स० ।

सौभाग्यालङ्काराः—

ॐ परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानि दाशुषे ।। ॐ भ. श. अलङ्कारान् सौभाग्यालङ्कारांश्चः स० ।

परिमलद्रव्याणि—

ॐ अहिरिव भोगैः पर्य्येति बाहुञ्ज्या हेतिम्परिबाधमानः । हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्पुमान्पुमा ꣳसम्परिपातु विश्वतः ।

ॐ भ. श. [1]सौभाग्यद्रव्याणि स० ।

सुगन्धिद्रव्यम्—

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव न्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पति-वेदनम् । उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः ।।

ॐ भ. श. सुगन्धिद्रव्यं स० ।

---

(१) अबीर-गुलाल-हरिद्रादिसौभाग्यद्रव्याणि समर्पयेत् ।

T

धूपः—

ॐ याते हे तिर्म्मीढुष्टुम हस्ते बभूव ते धनुः ।
तयाऽस्स्मान्न्विश्वतस्त्व मयक्ष्मया परिभुज ।।
ॐ कर्दमेन प्रजाभूता मयि संभवकर्दम ।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ।।

ॐ भ. श. धूपमाघ्रापयामि ।

दीपः—

ॐ परिते धन्न्वनो हेतिरस्मान्न्वृणक्तुव्विश्वतः ।
अथो यऽइषुधिस्तवारेऽअस्स्मन्निधेहितम् ।।
ॐ आपः स्रजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे ।
निच देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ।

ॐ भ. श. दीपं दर्शयामि ।

नैवेद्यम्—

ॐ अवतत्य धनुष्ट्व ठं- सहस्राक्ष शतेषुधे ।
निशीर्य्य शल्यानाम्मुखा शिवो नः सुमना भव ।।
ॐ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदोमऽमावह ।।

भवानीशङ्करयोः पुरतो नैवेद्यम् निधाय-

गायत्रीमन्त्रेण सम्प्रोक्ष्य, धेनुमुद्रां प्रदर्श्य, ग्रासमुद्रया—

ॐ प्राणाय स्वाहा ॐ अपानाय स्वाहा ॐ व्यानाय स्वाहा ॐ उदानाय स्वाहा ॐ समानाय स्वाहा । ॐ भवानीशङ्कराभ्यां नैवेद्यं निवेदयामि । पूर्वापोशनं स. । नैवेद्यमध्ये एलादियुतं पानीयं स० । ॐ भ. शङ्कराभ्यां मध्ये पानीयं स० । मध्ये ऋतुफलानि स. । उत्तरापोशनं स. । हस्तप्रक्षालनं स. । मुखप्रक्षालनं स. । नैवेद्यान्ते आचमनीयं स. । करोद्वर्तनार्थे गन्धं स. ।

ताम्बूलम्—

ॐ नमस्तऽआयुधायानातताय धृष्णवे । उभाभ्यामुतते नमो बाहुभ्यान्तव धन्न्वने ।।

ॐ आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो मऽआवह ।।

ॐ भ. श. एला-लवङ्गक्रमुकयुतं ताम्बूलं स० ।

दक्षिणा—

ॐ मानो महान्तमुतमानोऽअर्भकम्मानऽ उक्षन्तमुतमानऽ उक्षितम् । मानो व्वधीः पितरम्मोत मातरम्मानः प्प्रियास्तन्न्वोरुद्ररीरिषः ।।

ॐ ता मऽआवहजातवेदोलक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योश्वान् विन्देयं पुरुषानहम् ।।

ॐ भ. श. पूजासाद्गुण्यार्थे दक्षिणां स० ।

कर्पूरारार्त्तिक्यं प्रज्वाल्य 'ॐ ज्वालामालिन्यै नमः' इति संपूज्य—

नीराजनम्—

ॐ कर्पूरगौरं करुणावतारं, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम् ।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि ।।

ॐ अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ।।

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरौषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ।।

ॐ भ. श. नीराजयामि ।

पुष्पाञ्जलिः—

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने । नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । स मे कामान् कामकामाय मह्यं । कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु । कुबेराय वैश्रवणाय । महाराजाय नमः ।।

ॐ स्वस्ति । साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं

राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्सार्वभौमः सार्वायुषऽआन्तादापरार्धात् । पृथिव्यै समुद्रपर्यन्तायाऽएकराडिति तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्यावसन् गृहे । आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति ।

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतो बाहुरुतविश्वतस्पात् । सम्बाहुभ्यान्धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देवऽएकः ।

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि, तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ।

ॐ सुभगायै च विद्महे काममालिन्यै च धीमहि, तन्नो भवानी प्रचोदयात् ।

पत्रं पुष्पं फलं तोयं रत्नानि विविधानि च । गृहाणार्घ्यं मया दत्तं देहि मे वाञ्छितं फलम् । रूपं देहि जयं देहि भाग्यं भगवति देहि मे । पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे ।। फलेन फलितं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् । फलस्यार्घप्रदानेन पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ।। मम मनोरथाः सफलाः सन्तु । इति पुष्पाञ्जलिं समर्पयेत् ।

प्रदक्षिणा—

ॐ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः तेषांꣳ सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।।

इति भवानीशङ्करयोरेकां प्रदक्षिणां कृत्वा साष्टाङ्गप्रणामं कुर्यात् ।

क्षमापनम्

अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया । दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरि ।। आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् । पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि ।। मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि । यत्पूजितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे ।। अपराधशतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत् । यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः ।।

T

अज्ञानाद्विस्मृते र्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् । तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि ।। गतं पापं गतं दुःखं गतं दारिद्र्यमेव च । आगता सुखसंपत्तिः पुण्योऽहं तव दर्शनात् ।। मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा नहि । एवं ज्ञात्वा महादेवि यथायोग्यं तथा कुरु ।।

कृतेनानेन यथामिलितोपचारपूजनेन भवानीशङ्करस्वरूपिणी जगदम्बा प्रीयताम्, न मम ।

अथ पाठारम्भः

पुस्तकपूजनम्—

प्रथमं रुद्राष्टाध्यायीपुस्तके षडङ्गरुद्राष्टाध्याय्याधिष्ठातृसरस्वतीं ॐ नमस्तेरुद्र-इतिमंत्रेण पञ्चोपचारैः पूजयेत् । ततो दुर्गासप्तशतीपुस्तकेऽपि ॐ नमोदेव्यै महादेव्यै-इति मन्त्रेण तदधिष्ठातृसरस्वतीं पूजयेत् ।

पाठसंकल्प :—

[1]पाठकर्त्तारो विद्वांस आचम्य, प्राणानायम्य पृथक् २ स्व-स्वपाठ-संकल्पं कुर्युः । तद्यथा—ॐ तत्सद्य देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रोऽमुक-शर्मा अमुकगोत्रस्याऽमुकनाम्नो मद्यजमानस्य जगदम्बाप्रसादद्वारा मनोऽभी-ष्टसिद्ध्यर्थं सार्द्धनवचण्डीपुरश्चरणान्तर्गततया महाकाली-महालक्ष्मी-महा-सरस्वतीदैवतकस्य कवचाऽर्गलाकीलकसहितस्य रात्रिसूक्तादिदेवीसूक्तान्तस्य आदावन्ते चाष्टोत्तरशतनवार्णमन्त्रसम्पुटितस्य मार्कण्डेयपुराणान्तर्गत—'ॐ मार्कण्डेय उवाच—इत्यारभ्य सावर्णिर्भविता मनुः—इत्यन्तस्य रहस्यत्रय-सहितस्य सप्तशतीस्तवराजस्यैकपाठमहं करिष्यामि ।

एवं **नव** ब्राह्मणाः संकल्पं कुर्युः ।

दशमस्तु—पूर्वोक्तसंकल्पं यथावद् उच्चार्य, (एकपाठ-स्थाने) अर्द्धपाठमहं करिष्यामि—इत्येवं प्रकारेण संकल्पं कुर्यात् ।

एकादशस्तु—ॐ तत्सद्य-देशकालौ संकीर्त्य, अमुक-गोत्रोऽमुकशर्मा अमुकगोत्रस्यामुकनाम्नो मद्यजमानस्य जगदम्बाप्रसादद्वारा

---

(१) पाठकर्त्तारो विद्वांसः स्नानसंध्याशीला दीक्षिताः, यावच्छत्रयं प्रत्यहं सप्तशती-पाठकर्त्तार एव ग्राह्याः, न तु तदतिरिक्ता-इति विशेषतोऽवधेयम् ।

T

मनोऽभीष्टसिद्ध्यर्थं साद्धं नवचण्डीपुरश्चरणान्तर्गततया यजुर्वेदीय-वाजसनेयिशाखान्तर्गतषडङ्गरुद्राष्टाध्याय्या एकपाठमहं करिष्यामि ।

अर्द्धपाठस्य क्रमः

अर्द्धपाठे तु—दुर्गासप्तशत्यां प्रथमाध्यायतश्चतुर्थाध्याये शक्रादिस्तुतिपर्यन्तं (न तु समग्रश्चतुर्थोऽध्यायः) पञ्चमाध्याये केवलं देवीसूक्तम्, अग्रे एकादशाध्याये नारायणीस्तुतिमात्रं ततो द्वादशत्रयोदशाध्यायौ समग्रौ-इत्येतावानेव सप्तशत्याः पाठोऽर्धपाठे गृह्यते ।[1]

एवं सर्वेऽपि पाठकर्त्तारो विद्वांसो महत्या शान्त्या भक्त्या एकाग्रेण मनसा च पाठकार्यं सम्पादयेयुः । पाठान्ते च श्रीदेव्यै समर्पणं कृत्वा सप्तशतीपाठेनैकेन हवनं कुर्यात् ।

हवनारम्भः

अथाचार्यो हवनोक्तविधानेन यजमानहस्तेनाचार्यहस्तेन वा चतुर्विंशत्यङ्गुलां वेदीं निर्माय, अग्निमुपसमाधाय हव्यद्रव्याणि संकलय्य हवनं कुर्यात् ।

कुशकण्डिका

गौरसर्षपान् विकीर्य भूतोत्सादनं कुर्यात् । "ॐ आपोहिष्ठेत्यादि"—मन्त्रैः पञ्चगव्येन वेदीं सम्प्रोक्ष्य पञ्चभूसंस्कारान् कुर्यात् ।

---

(१) अर्थात् अर्धपाठकर्त्ता विद्वान् पूर्णपाठकर्तृभिः सह (पूर्वाङ्गम्) षडक्षरगणपतिमन्त्रजपपूर्वकं कवचार्गलाकीलक-रात्रिसूक्ताऽष्टोत्तरशत-नवार्णमन्त्रजपान् कृत्वा न्यासध्यानपुरस्सरं सप्तशतीं प्रारभेत । प्रारम्भतः (ॐ मार्कण्डेय उवाच-इत्यारभ्य) प्रथम-द्वितीय-तृतीयाध्यायान् समग्रान् चतुर्थाध्याये "ऋषिरुवाच-शक्रादयः सुरगणा-इत्यारभ्य 'तैरस्मान् रक्ष सर्वतः'—इति पर्यन्तं, पञ्चमाध्याये 'देवा ऊचुः-इत्यारभ्य सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्त्तिभिः'– इति पर्यन्तम् (न. तु सम्पूर्णं पञ्चमाध्यायम्) षष्ठ-सप्तमाष्टम-नवम-दशमाध्यायानां पाठं परित्यज्य, एकादशे 'देव्या हते' इत्यारभ्य लोकानां वरदा भव'-इति पर्यन्तम्, अग्रे द्वादशत्रयोदशाध्यायौ समग्रौ पठित्वा, तदुत्तरन्यासान् विधाय, उत्तराङ्गम् अर्थात् अष्टोत्तरशतनवार्णमन्त्रान् जपित्वा तदुत्तरन्यासान् विधाय देवीसूक्त-रहस्य-त्रयक्षमापनान्तं पठेदिति—अर्धपाठकर्तुः पाठक्रमः ।

[1]पञ्चभूसंस्काराः—

(१) (दर्भैः परिसमूह्य) अर्थात् त्रिभिर्दर्भैः त्रिवारं वेदीं परिसमूह्य (सम्मृज्य) तान् कुशान् ऐशान्यां दिशि परित्यजेत् ।

(२) (गोमयेनोपलिप्य) त्रिवारं वेदीं गोमयोदकाभ्यामुपलिप्य—

(३) (स्रुवेणोल्लिख्य) स्रुवेण प्रागग्रम् उत्तरोत्तरक्रमेण प्रादेशपरिमाणाः स्थण्डिलपरिमाणा वा तिस्रो रेखाः कृत्वा—

(४) (अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यामुद्धृत्य) अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां ताभ्यो रेखाभ्यः पांसुमुद्धृत्य वामहस्ते धारयित्वा, पुनर्द्वितीयवारमुद्धृत्य तमपि वामहस्ते धृत्वा पुनस्तृतीयवारमुद्धृत्य तमपि वामहस्ते धृत्वा, तत्सर्वं दक्षिणहस्ते गृहीत्वा ईशान्यामरत्निमात्रे देशे प्रक्षिप्य—

(५) (उदकेनाभ्युक्ष्य) उल्लिखितरेखाक्रमेण उदकेन अधोमुखेन हस्तेन[2] अभ्युक्ष्य—

अग्निस्थापनम्—

कांस्यपात्रेण तदभावे नवीनशरावेण (मृत्पात्रेण) पात्रान्तरेण पिहितं श्रोत्रियादिगृहात् स्वगृहाद्वा, आचारात् सुवासिन्याऽऽनीतं निर्धूमं वह्निं स्थण्डिलस्य मध्य एवाग्निकोणे निधाय, तत्रैव आमात्क्रव्यादुरुपमङ्गारद्वयं हुंफट् इति मंत्रेण क्रव्यादांशं नैर्ऋत्यां दिशि परित्यज्य, शेषमग्निम्

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुपब्रुवे । देवाँऽआसादयादिह ।

—इति मन्त्रेण वेदीमध्ये स्थापयेत् । ततः तदुपरि तद्रक्षार्थं प्रोक्षितेन्धनानि प्रक्षिप्य मुखेन तं धमेत् ।

तत आनीताऽग्निपात्रं जलादिना सम्प्रोक्ष्य गन्धादिना संपूज्य च आचारात् तत्पात्रे यत्किञ्चिद्द्रव्यं निक्षिप्य, तद्द्रव्यं सुवासिन्यै दापयेत् ।

---

१. "उत्तरतो, यज्ञोपचाराः" इति कात्यायनोक्तसूत्रानुसारेण दक्षिणदिगारभ्य उदीचीपर्यन्तं, प्रतीचीदिगारभ्यप्राचीपर्यन्तं दैवं कार्यं समापयेत् ।

२. प्रोक्षणं, पर्युक्षणम्, अभ्युक्षणमिति त्रयोऽपि पदार्थाः भिन्नाः सन्ति, तेषां लक्षणमित्थम्— उत्तानेन हस्तेन प्रोक्षणं समुदाहृतम् ।
तिरः पर्युक्षणं प्रोक्तं नीचेनाभ्युक्षणं स्मृतम् ॥

T

ततः शान्तिके वरदनामाग्ने! सुप्रतिष्ठितो वरदो भव इति प्रतिष्ठाप्य, मुखं कृत्वा ध्यायेत्—

ॐ चत्वारि शृङ्गा त्रयोऽअस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो-ऽअस्य त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यां२ऽआविवेश ॥

ॐ अग्निं प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनम् ।
सुवर्णवर्णममलमनन्तं विश्वतोमुखम् ॥
सर्वतः पाणिपादश्च सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः ।
विश्वरूपो महानग्निः प्रणीतः सर्वकर्मसु ॥

ततो दक्षिणतो ब्रह्मासनम्, उत्तरतः प्रणीतासनम् । ब्रह्मासने पञ्चाशत्कुशनिर्मितं यथासम्भवकुशमयं वा प्रदक्षिणग्रन्थिकं दक्षिणावर्त्तं सार्धद्विग्रन्थियुतमूर्ध्वकेशं प्राङ्मुखोपविष्टो यजमानः उदङ्मुखं कौशं [1]ब्रह्माणं वृत्वाग्निप्रदिक्षणं कारयित्वा ब्रह्माणमग्नेर्दक्षिणे पीठादौ प्रागग्रास्तीर्णदर्भेषु स्थापयेत् । 'यावत्कर्म समाप्यते, तावत्त्वं ब्रह्मा भव'—इति सम्प्रार्थ्य,

प्रणीताप्रणयनम्—

ॐ प्रणय ३-इति ब्रह्मणानुज्ञातः, अग्नेरूत्तरतः प्रागग्रैः कुशैः द्वे आसने स्थापयेत्—एकं पूर्वे एकञ्च पश्चिमे । तत्र प्रणीतापात्रं सव्य (वाम) हस्ते कृत्वा, दक्षिणहस्तोद्धृतपात्रस्थजलेनाऽऽपूर्य दर्भैराच्छाद्य, ब्रह्मणो मुखमवलोक्य, पश्चिमासने दक्षिणहस्तेन निधाय, तत्पात्रमालभ्य दक्षिणहस्तेन गृहीत्वा पूर्वासने निदध्यात् ।

परिस्तरणम्—

दर्भैः आग्नेयादीशानान्तम्, ब्रह्मणोऽग्निपर्यन्तम्, नैर्ऋत्याद् वायव्यान्तम्, अग्नितः प्रणीतापर्यन्तम् । अर्थात् त्रिभिस्त्रिभिः चतुर्भिश्चतुर्भिर्वा कुशैः अग्नेः पुरस्तादुदगग्रैः, दक्षिणतः प्रागग्रैः, पश्चादुदगग्रैः, उत्तरतः प्रागग्रैः परिस्तरणं कृत्वा इतरथावृत्ति कुर्यात् ।

---

१. ऊर्ध्वकेशो भवेद् ब्रह्मा, लम्बकेशस्तु विष्टरः—अत्र केशशब्देन कुशस्य अग्रभागो बोध्यः ।

पात्रासादनम्—

अग्नेरुत्तरतः पवित्रच्छेदनानि त्रीणि कुशतरूणानि, पवित्रे साग्रेऽनन्तरगर्भे कुशपत्रे द्वे, प्रोक्षणीपात्रम्, आज्यस्थाली, चरूस्थाली, सम्मार्जनकुशास्त्रयः पञ्च वा उपयमनकुशास्त्रिप्रभृतयः त्रयोदशपर्यन्ताः समिधस्तिस्रः प्रादेशमात्राः, स्रुवः, स्रुक्, आज्यं, तण्डुलाः, पूर्णपात्रं हवनीयद्रव्यं ग्रहसमिधश्च ।

ततो द्वौ कुशौ अग्रे प्रादेशमात्रमवशेषयन् वामहस्ते धृत्वा तत्र कुशत्रयं दक्षिणेन करेण निधाय, कुशद्वयं कुशत्रयस्योपरितः प्रदक्षिणीकृत्य दक्षिणेन गृहीत्वा, कुशत्रयं च वामेन गृहीत्वा छिन्द्यात्, कुशत्रयं त्यजेत् ।

प्रोक्षणीसंस्कारः—

ततः प्रोक्षणीपात्रं प्रणीतासन्निधौ निधाय सपवित्रेण हस्तेन त्रिः प्रणीतोदकमासिच्य, अनामिकाङ्गुष्ठाभ्याम् उत्तराग्रे पवित्रे धृत्वा त्रिरूत्पवनम् । ततः प्रोक्षणीपात्रं सव्यहस्ते कृत्वा अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां पवित्रे धृत्वा त्रिवारम् उदिङ्गनम् (अर्थात् जलस्योच्छालनं) कृत्वा प्रणीतोदकेन प्रोक्षेत् ।

ततः प्रोक्षणीजलेन यथाऽऽसादितद्रव्यसेचनम्, तद्यथा-आज्यस्थालीप्रोक्षणं चरूस्थालीप्रो० सम्मार्जनकुशप्रो. उपयमनकुशप्रो० समिधः प्रो. स्रुवप्रो. स्रुक्प्रो. तण्डुलप्रो. आज्यप्रो. पूर्णपात्रप्रो. हवनीयद्रव्यप्रो. एवमन्यदपि यथासादितद्रव्यं प्रोक्ष्य, अग्निप्रणीतयोर्मध्ये सपवित्रं प्रोक्षणीपात्रं निदध्यात् ।

ततः आज्यस्थाल्यामाज्यनिर्वापः, चरुस्थाल्यां तण्डुलान् त्रिः प्रक्षाल्य प्रणीतोदकमासिच्य, तत्र किञ्चिज्जलान्तरं दत्वा अग्नेर्दक्षिणे आज्यं मध्ये चरुमधिश्रयेत् ।

ततः सिद्धे चरौ, ज्वलत्तृणादि चर्वाज्ययोरूपरि भ्रामयित्वा वह्नौ तत्प्रक्षेपः ।

ततोऽधोमुखं स्रुवं त्रिः प्रताप्य, वामे पाणौ तमुत्तानं कृत्वा दक्षिणेन

करेण सम्मार्जनकुशानामग्रै र्मूलतोऽग्रपर्यन्तं, मूलैः प्रत्यत्वं स्रुवं संमृज्य प्रणीतोदकेनाभ्युक्ष्य पुनस्त्रिः प्रताप्य दक्षिणतः कुशोपरि निदध्यात् ।

तत आज्यमग्नितश्चरोः पूर्वेणानीयाऽग्रे धृत्वा, आज्यपश्चिमेन चरुमानीय आज्यस्योत्तरतो निदध्यात् ।

ततः पवित्राभ्यामाज्ये प्रोक्षणीवदुत्पवनम्, अवेक्ष्य सत्यपद्रव्ये तन्नि-रसनम् । ततः पूर्ववत् प्रोक्षण्युत्षवनम् ।

ततः पवित्रे प्रोक्षणीपात्रेनिधाय, उपयमनकुशान् दक्षिणेनादाय वामकरे कृत्वा प्रजापतिं मनसा ध्यात्वा घृताक्ताः तिस्रः समिधः 'समिधोऽभ्यादाय स्वाहा'–इति पठन् वह्नौ प्रक्षिपेत् ।

अथोपविश्य सपवित्रप्रोक्षणीजलेन स-हविष्कमग्निं प्रणीताब्रह्मसहितं प्रदक्षिणक्रमेण संप्रोक्ष्य, [1]इतरथाऽऽवृत्तिं च कृत्वा पवित्रे प्रणीतापात्रे धृत्वा प्रोक्षणीपात्रं स्वस्थाने निदध्यात् ।

ततः कुशै र्ब्रह्मणाऽन्वारब्धः पातितदक्षिणजानुः उपयमनकुशसहितं हस्तं हृदि निधाय मूलमध्यभागयोर्मध्येन स्रुवं गृहीत्वा समिद्धतमेऽग्नौ घृतेन जुहुयात् ।

आघारहोमः—

'ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये, न मम'—इति मनसा ध्यात्वा (न तु उच्चारणं कुर्यात्) अग्नेरुत्तरप्रदेशे पूर्वाधारम् आघारयेत् ।

'ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय, न मम'–इत्युच्चार्य अग्नेर्दक्षिणप्रदेशे उत्तराघारमाधारयेत् ।

आज्यभागहोमः—

'ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम' इत्युच्चार्य अग्नेरूत्तरार्द्धपूर्वार्द्धे 'ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम'—इत्युच्चार्य जुहुयात् । प्रत्याहुत्य-नन्तरं स्रुवावस्थितहुतशेषघृतं प्रोक्षणीपात्रे प्रक्षिपेत् (अग्रेऽपि होममात्रे स्रुवावस्थितं किञ्चिद् घृतं प्रोक्षणीपात्रे प्रक्षिपेत्)

१. दैवेषु कर्मसु यत्र प्रदक्षिणावृत्तिर्विहिता, तत्र तां कृत्वा तदवसाने एकम-प्रदक्षिणं कुर्वन्ति, सैव प्रत्यावृत्तिः, 'इतरथावृत्ति' रित्युच्यते ।

अग्निपूजनम्

ॐ अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान्विश्वानि देवव्वयुनानि विद्वान् । युयोद्ध्यस्म्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नमऽउक्तिं व्विधेम ।।

इति मन्त्रेण शान्तिके "ॐ वरदनामाग्नये नमः" इति वेद्या वायव्यकोणे गन्धादिभिरग्निं सम्पूजयेत् । [1]ततः

(१) **'ॐ वरुणस्योत्तंभनमसि'**– स्वाहा, इदं वरूणाय न मम ।
(२) **'ॐ वरुणस्य स्कम्भसर्जनीस्थो'**–स्वाहा "
(३) **'ॐ वरुणस्य ऋतसदन्यसि'**— स्वाहा "
(४) **'ॐ वरुणस्य ऋतसदनमसि'**— स्वाहा "
(५) **'ॐ वरुणस्य ऋतसदनमासीद'**– स्वाहा "

इति केवलं पञ्च घृताहुतयः प्रदेयाः । इति कुशकण्डिकापूर्वाङ्गम् ।

ततः प्रथमं 'ॐ गणानान्त्वेति– मन्त्रेण 'ॐ गणपतये स्वाहा, इदं गणपतये, न मम'— इति पठन्नष्टाविंशतिभिरष्टभिर्वा जुहुयात् । एवं "ॐ आयङ्गौ···" 'ॐ अम्बेऽम्बिक्के····' इति द्वयोर्मध्ये केनापि एकमन्त्रेण गणपतिवत् 'ॐ गौर्यै स्वाहा, इदं गौर्यै, न मम'–इति पठन्नाहुतिं दद्यात् ।

ततो नवग्रहाणां होमं कुर्यात् । [2]'ॐ आकृष्णेन रजसा····' –इत्यादि नवग्रहाणां मन्त्रैः प्रत्येकस्मै ग्रहाय अष्टौ चरुतिलाज्यसमिद्भिराहूतीर्दद्यात् । तद्यथा–'ॐ सूर्याय स्वाहा' 'ॐ चन्द्रमसे स्वाहा'—इत्यादि । एवं तत्तन्मन्त्रैः तत्तद्ग्रहाणां हवनं विधेयम् । ग्रहाणां समिधस्तु यथाक्रमं बोध्याः—

[3]अर्कः पलाशखदिरावपामार्गोऽथ पिप्पलः ।
औदुम्बरः शमी दूर्वा कुशाश्च समिधः क्रमात ।।

एतासां मध्ये कस्या अपि ग्रहसमिधोऽलाभे तु पलाशसमिधा हवनं कार्यम् :

---

(१) आघारावाज्यभागौ तु जुहुयात् पञ्चवारुणम् ।
समिदाज्यचरोर्होमतिलहांमक्रमेण च ।। –इति स्मरणात् ।

(२) नवग्रहाणां मन्त्राः (१९) पृष्ठेऽवलोकनीयाः ।

(३) एतासां हिन्द्यां प्रान्तीयनामानि क्रमशो बोध्यानि–(सू-) आकडा, (चं.) छीला डांड, (मं.) खैरी, (बु.) आंधीझाडा, (बृ.) पीपल, (शु.) गूलर, (श.) खेजड़ा, (रा.) दूब, (के.) कुशा ।

अथ सप्तशतीपाठेन हवनारम्भः

अथाचार्यः 'ॐ वक्रतुण्डाय हुम्' - इति षडक्षरगणपतिमन्त्रेणाष्टोत्तरशताहुतीर्दत्वा, कवचार्गलाकीलकरात्रिसूक्तानां पाठमात्रं कृत्वा नवार्णमन्त्रस्य विनियोगन्यासध्यानपूर्वकमष्टोत्तरशतसंख्याकैर्नवार्णमन्त्रैः आहूतीर्दद्यात् । ततः सप्तशतीसंकल्पन्यासध्यानपूर्वकं सप्तशतीहवनं प्रारभेत । तत्र यजमानः घृताहुतिम्, एकश्च ब्राह्मणस्तिलादिहवनीयद्रव्येण प्रतिमन्त्रमाहुतिं दद्यात् ।

चतुर्थाध्याये शक्रादिस्तुतौ तथा एकादशाध्याये नारायणीस्तुतौ च तिलादिहवनीयद्रव्यस्थाने क्षीरिकाख्येन पायसेनैव आहुतिं दद्यात् । तथा चतुर्थाध्याये 'शूलेन पाहि नो देवि—इत्यारम्य करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः'—इत्यन्तं चतुर्णां मन्त्राणां पाठमात्रं कुर्यात्, न तु एभिर्मन्त्रैराहुतिं जुहुयात् (१) तत्स्थाने नवार्णमन्त्रैश्चतस्र आहूतीर्दद्यात् ।

तथा प्रत्यध्यायान्ते पूगफल-लवङ्गैला-कमलवीज (कमलगट्टा) हविर्द्रव्याणि नागवल्लीदले सूत्रेण सम्पुटितानि स्रुचि स्थापयित्वा, उत्थाय—

ॐ प्राणाय स्वाहाऽपानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा । अम्बेऽअम्बिकेऽम्बालिके न मानयति कश्चन ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कां पीलवासिनीम् स्वाहा-इति मन्त्रं पठन्नाहुतिं दद्यात् ।

ततो—**ॐ घृतं घृतपावानः पिबतव्वसां वसा पावानः । पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिशऽआदिशो व्विदिशऽउद्दिशो दिग्भ्यःस्वाहा ।।** इति पठन् घृताहुतिं दद्यात् ।

ततः 'ॐ जय २ मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये सत्याः सन्तु मम कामाः । (आचार्यकर्तृकत्वे तु 'मम' स्थाने 'मद्यजमानस्य कामाः' इति वक्तव्यम्) ॐ तत्सत् 'जगदम्बार्पणमस्तु'-इति पठित्वा जलमुत्सृजेत् । एवं त्रयोदशाध्यायान्ते सप्तशतीन्यासादिकं विधाय, अष्टोत्तरशतनवार्णमन्त्रैराहुतिं दत्त्वा, तदुत्तरन्यासादिकं विधाय (उत्तराङ्ग) देवीसूक्त-रहस्यत्रय-क्षमापनान्तस्य पाठमात्रं कुर्यात् ।

तत एको विद्वान् सप्तशतीहवनाङ्गत्वेन 'ॐ भवानीशङ्करौ तर्पयामि' इति पठन् अष्टोत्तरशतसंख्यया दुग्धमिश्रितजलेन दूर्वया तर्पणं, तद्दशांशेन

च 'ॐ भवानीशङ्करौ मार्जयामि'—इति पठन् मार्जनं कुर्यात् ।

तदनन्तरम्—"ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ"— इति बटुकभैरवस्य मूलमन्त्रेण, अथवा [1]आपदुद्धारबटुकभैरव-स्तोत्रस्य चतुर्थ्यन्तैर्नामभिरष्टोत्तरशतसंख्याकाहूतीर्दद्यात् ।

---

(१) ॐ अस्य श्रीआपदुद्धारबटुकभैरवस्तोत्रस्य बृहदारण्यक ऋषिरनुष्टुप्छन्दः श्रीबटुकभैरवो देवता ह्रीं बीजं बटुकाय शक्तिः प्रणवः कीलकं बटुकभैरवप्रसादसिद्ध्यर्थे (पाठे) होमे विनियोगः ।

ॐ भैरवो भूतनाथश्च, भूतात्मा भूतभावनः ।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च, क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ॥१॥
श्मसानवासी मांसाशी, खर्पराशी स्मरान्तकृत् ।
रक्तपः पानपः सिद्धः, सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥२॥
कङ्कालः कालशमनः, कलाकाष्ठातनुः कविः ।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च, तथा पिङ्गललोचनः ॥३॥
शूलपाणिः खड्गपाणिः, कङ्काली धूम्रलोचनः ।
अभीरुर्भैरवीनाथो, भूतपो योगिनीपतिः ॥४॥
धनदो [2]धनहारी च, धनवान् प्रतिभानवान् ।
नागहारो नागपाशो, व्योमकेशः कपालभृत् ॥५॥
कालः कपालमाली च, कमनीयकलानिधिः ।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रः, त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥६॥
त्रिनेत्रतनयो डिम्भः, शान्तः शान्तजनप्रियः ।
बटुको बहुवेषश्च, खट्वाङ्गवरधारकः ॥७॥
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ।
धूर्त्तो दिगम्बरः [3]शौरिर्हरिणः पाण्डुलोचनः ॥८॥
प्रशान्तः शान्तिदः सिद्धः, शङ्करप्रियबान्धवः ।
अष्टमूर्त्तिर्निधीशश्च, ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥९॥

(२) अधनहारी-पाठा० । (३) शूरः-पाठा०

अष्टाधारः षडाधारः, सर्पयुक्तः शिखी सखा ।
भूधरो भूधराधीशो, भूपतिर्भूधरात्मजः ॥१०॥
कङ्कालधारी मुण्डी च, नागयज्ञोपवीतकः ।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी, मारणः क्षोभणस्तथा ॥११॥
शुद्धो नीलाञ्जनप्रख्यो, दैत्यहा मुण्डभूषितः ।
बलिभुग् बलिभुङ् नाथो. बालो बालपराक्रमः ॥१२॥
सर्वापत्तारणो दुर्गो, दुष्टभूतनिषेवितः ।
कामी कलानिधिकान्तः, कामिनीवशकृद् वशी ॥१३॥
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभुर्विष्णुरितीव हि ।
अष्टोत्तरशतं नाम्नां भैरवस्य महात्मनः ॥१४॥

श्रीसूक्तेन होमः–

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो ममावह[१] ।१। महालक्ष्म्यै स्वाहा ।
ॐ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥२॥ ,,
ॐ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मादेवी जुषताम् ॥३॥ ,,
ॐ कां सोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलंतीं तृप्तां तर्पयन्तीम् ।
पद्मेस्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥४॥ ,,
ॐ चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तां पद्मनेमिं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ॥ ,,
ॐ आदित्यवर्णे तपसोधिजातो वनस्पतिस्तववृक्षोऽथ बिल्वः ।
तस्य फलानि तपसानुदन्तु मायान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः ।,,
ॐ उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतो सुराष्ट्रेऽस्मिन्कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ॥७॥ ,,

१. ऋग्वेदस्य शाखाभेदेन पाठभेदो बोध्यः । यथा-१मन्त्रे 'मऽआवह', २म. 'अश्वपूर्णाम्', 'प्रमोदिनीम्' । ७ म. 'प्रादुर्भूतोऽस्मि' एवं १३,१४ मन्त्रयोः पौर्वापर्यमपि दृश्यते ।

ॐ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात् ॥८॥ "
ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥९॥ "
ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ॥१०॥ "
ॐ कर्दमेन प्रजाभूता मयि संभवकर्दम ।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥११॥ "
ॐ आपः स्रजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे । "
निच देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥१२॥ "
ॐ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदोमऽआवह ॥१३॥ "
ॐ आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो मऽआवह ॥१४॥ "
ॐ ता मऽआवहजातवेदोलक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योश्वान् विन्देयं पुरुषानहम्१५

स्विष्टकृद्धोमः--

ततः सर्वेभ्यो हविर्भ्यः– 'ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते, न मम–इति सर्वमपि हविर्द्रव्यं स्वाभिमुखं जुहुयात् ।

अथ नवाज्याहुतयः–

"ॐ भूः स्वाहा" इदमग्नये, न मम । "ॐ भुवः स्वाहा" इदं वायवे, न मम । "ॐ स्वः स्वाहा" इदं सूर्याय, न मम । "ॐ त्वन्नोऽग्ने व्वरुणस्य व्विद्वान्देवस्य हेडोऽ अव यासिसीष्ठाः । यजिष्ठो व्वह्नितमः शोशुचानो व्विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा". इदमग्निवरुणाभ्यां, न मम । "ॐ स त्वन्नोऽ अग्नेऽवमो भवोती

नेदिष्ठोऽ अस्याऽउषसो व्युष्टौ । अव यक्ष्व नो व्वरुणर्ठ. रराणो व्वीहि मृडीकर्ठ. सुहवो नऽ एधि स्वाहा । इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

"ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमया ऽअसि। अया नो यज्ञं वहास्ययया नो धेहि भेषजर्ठ्ठस्वाहा" इदमग्नये अयसे न मम। "ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशाव्वितता महान्तः। तेभिर्नोऽ अद्य सवितोत विष्णुर्व्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा" इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम। "ॐ उदुत्तमं व्वरुण पाशमस्मदवाधमं व्वि मध्यमर्ठ्ठश्रथाय। अथाव्वयमादित्य व्व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा" इदं वरुणायादित्यायादितये च,न मम। "ॐ प्रजापतये स्वाहा" इदं प्रजापतये न मम।

होमान्ते स्थापितदेवानाम् उत्तरपूजनं कर्त्तव्यम्।

ततो दिक्पालपूजनं बलिदानञ्च—(एकतन्त्रेण)

पूर्वे—इन्द्राय नमः, इन्द्रस्यानुचरेभ्यो नमः।

आग्नेयाम्—अग्नये नमः, अग्नेरनुचरेभ्यो नमः।

दक्षिणे—यमाय नमः, यमस्यानु० ,,

नैऋत्याम्—निर्ऋतये नमः, निर्ऋतेरनु० ,,

पश्चिमे—वरुणाय नमः, वरुणस्यानु० ,,

वायव्याम्—वायवे नमः, वायोरनु० ,,

उत्तरे—कुबेराय नमः, कुबेरस्यानु० ,,

ऐशान्याम्—ईशानाय नमः, ईशानस्यानु० ,,

ऊर्ध्वम्—ब्रह्मणे नमः, ब्रह्मणोऽनु० ,, (पूर्वेशानयोर्मध्ये)

अधः—अनन्ताय नमः, अनन्तस्यानु० ,,(पश्चिमनिर्ऋत्योर्मध्ये)

इन्द्रादिदशदिक्पालान् साङ्गान् सपरिवारान् सायुधान् सशक्तिकान् एभिर्गन्धाद्युपचारैः पूजयामि।

इन्द्रादिदशदिक्पालेभ्यः साङ्गेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः इमं सदीपदधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि।

भो भो इन्द्रादिदशदिक्पालाः दिशो रक्षत, बलिं भक्षत, मम सकुटुम्बस्याभ्युदयं कुरुत। मम गृहे आयुःकर्त्तारः, क्षेमकर्त्तारः शान्तिकर्त्तारः, पुष्टिकर्त्तारः तुष्टिकर्त्तारः फलदा वरदा भवन्तु।

अनेन बलिदानेन इन्द्रादिदशदिक्पालाः प्रीयन्ताम्–इति जलमुत्सृजेत्।

क्षेत्रपाल-बलिदानम्—

ततस्तैलपूरितचतुर्वर्तिप्रज्वलितदीपकसहितं माषभक्तदधिसंयावशष्कुलिसिन्दूरयुतं बलिं पलाशादिपात्रे निधाय नैर्ऋत्यां दिशि क्षेत्रपालमावाहयेत्—

ॐ हिङ्काराय स्वाहा हिङ्कृताय स्वाहा क्रदन्ते स्वाहा वक्रन्दाय स्वाहा प्रोथते स्वाहा पप्रोथाय स्वाहा गन्धाय स्वाहा घ्राताय स्वाहा निविष्टाय स्वाहोपविष्टाय स्वाहा संदिताय स्वाहा वल्गते स्वाहासीनाय स्वाहा शयानाय स्वाहा स्वपते स्वाहा जाग्रते स्वाहा कूजते स्वाहा प्रबुद्धाय स्वाहा विजृंभमाणाय स्वाहा विचृताय स्वाहा सठ्ंहानाय स्वाहोपस्थिताय स्वाहाऽयानाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहा ॥१॥

यते स्वाहा धावते स्वाहोद्रावाय स्वाहोद्रुताय स्वाहा शूकाराय स्वाहा शूकृताय स्वाहा निषण्णाय स्वाहोत्थिताय स्वाहा जवाय स्वाहा बलाय स्वाहा विवर्त्तमानाय स्वाहा विवृत्ताय स्वाहा विधून्वानाय स्वाहा विधूताय स्वाहा शुश्रूषमाणाय श्रृण्वते स्वाहेक्षमाणाय स्वाहेक्षिताय स्वाहा व्वीक्षिताय स्वाहा निमेषाय स्वाहा यदत्ति तस्मै स्वाहा यत्पिबति तस्मै स्वाहा यन्मूत्रं करोति तस्मै कुर्वते स्वाहा कृताय स्वाहा ॥२॥

कौलीरे चित्रकूटे हिमगिरिशिखरे कांतजालंधरे वा सौराष्ट्रे सिंधुदेशे मगधपुरवरे कौसले वा कलिंगे। कर्णाटे कौंकणे वा भृगुषु पुरवरे कान्यकुब्जे स्थिता वा ते सर्वे यज्ञरक्षाकरणकृतधियः पांतु वः क्षेत्रपालाः ॥३॥

T

ॐ क्षेत्राधीशाय नमः, क्षेत्राधीशस्यानुचरेभ्यो नमः – इति बलिपात्रे गन्धाक्षतपुष्पैः संपूज्य—

ॐ भूर्भुवः स्वः भूतप्रेतपिशाचडाकिनीशाकिनीसहिताय क्षेत्रपालाय इमं सदीपं दधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि–इति पठन् जलमुत्सृजेत् । प्रार्थयेच्च भो भोः क्षेत्रपाल ! इमं वलिं गृहाण । मम सकुटुम्बस्य गृहे आयुःकर्त्ता क्षेमकर्त्ता शान्तिकर्त्ता पुष्टिकर्त्ता तुष्टिकर्त्ता फलदो वरदो भव ।

नमामि क्षेत्रपाल ! त्वां, भूतप्रेतगणावृतः ।
पूजां बलिं गृहाणेमं, सौम्यो भवतु सर्वदा ।।
आयुरारोग्यमैश्वर्यं, देहि त्वं सर्वदा मम ।
मा विघ्नं मा च मे पापं, मा सन्तु परिपन्थिनः ।।
सर्वदा सर्वकार्येषु, क्षेत्रपालसमन्विताः ।
सौम्या भवन्तु तृप्ताश्च, भूतप्रेताः सुखावहाः ।। इति सम्प्रार्थ्य,

"अनेन बलिदानेन क्षेत्रपालः प्रीयताम्, न मम"–इति जलमुत्सृजेत् ।

ततः पश्चादनवेक्षमाणः कश्चित् पुरुषो बलिपात्रं गृहीत्वा चतुष्पथे स्थापयेत् । आचार्यस्तु–"द्यौः शान्तिः·········' इति शान्तिपाठं पठन् प्रोक्षणं कुर्यात् । यजमानस्तु हस्तौ पादौ प्रक्षाल्याचम्य मण्डपं प्रविशेत् ।

अथ पूर्णाहुतिहोमः—

पूर्णाहुत्यां ॐ मृडनाम्ने वैश्वानराय नमः । तथा गन्धादिभिरभ्यर्चयेत् ।

स्रुक्स्रुवौ प्रताप्य, संमृज्य, अभ्युक्ष्य, पुनः प्रताप्य निदध्यात् । स्रुचि स्रुवेण चतुर्वारमाज्यं पूरयित्वा, तदुपरि सूत्रेण वेष्टितं फलं निधाय, तदुपरि अधोमुखं स्रुवं संस्थाप्य, तत्र–एकोनपञ्चाशद्मरुद्गणेभ्यो नमः, इति गन्धाक्षतपुष्पधूपदीपनैवेद्यदक्षिणा निवेदयेत् ।

ततस्तां गृहीत्वा, उत्थाय, घृतेनाविच्छन्नधारां पातयन् जुहुयात् । तद्यथा—मूर्द्धानमिति मन्त्रस्य भारद्वाजऋषिर्वैश्वानरो देवता त्रिष्टुप् छन्दः पूर्णाहुतिहोमे विनियोगः ।

ॐ मूर्द्धानं दिवोअरतिंपृथिव्यावैश्वानरमृतआजातमग्निम् । कविंसम्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं जनयंत देवाः ।।१।।

पूर्णादर्विपरापतसुपूर्णापुनरापत। व्वस्नेवव्विक्रीणावहाऽइषमूर्जं शतक्रतो ॥२॥ चित्तिञ्जुहोमिमनसाघृतेनयथादेवाइहा गमन्वीतिहोत्राऽऋतावृधः। पत्येविश्वस्यभूमनो जुहोमि विश्वकर्मणेव्विश्वाहादाभ्यहविः ॥३॥ सप्ततेऽग्ने समिधः सप्तजिह्वाः सप्त ऋषयः सप्त धाम प्रियाणि। सप्तहोत्राः सप्तधात्वायजन्तिसप्त योनीरापृणस्वा घृतेनस्वाहा ॥४॥ शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्मांश्च। शुक्रश्च ऋतपाश्चात्यंहाः। ईदृङ् चान्यादृङ्च सदृङ्च प्रति सदृङ्। मितश्चसम्मितश्चसभराः ॥६।

ऋतश्च सत्यश्च ध्रुवश्च धरुणश्च। धर्त्ताच विधर्त्ताच व्विधारयः ॥७॥ ऋतजिच्च सत्यजिच्च सेनजिच्च सुषेणश्च अन्तिमित्रश्च दूरे अमित्रश्च गणः ॥८॥ ईदृक्षासऽएतादृक्षासऽऊषुणः सदृक्षासःप्रतिसदृक्षासऽएतन। मितासश्चसम्मितासोनोऽअद्यसभरसो मरुतोयज्ञेऽअस्मिन् ॥९॥ स्वतवांश्चप्रघासीचसांतपनश्चगृहमेधी च। क्रीडीचशाकी चोज्जेषी॥१०॥ उग्रश्च भीमश्च ध्वान्तश्च धुनिश्च। सासह्वांश्चाभियुग्वाच विक्षिपः स्वाहा ॥११॥ पुनस्त्वाऽऽदित्या रुद्राव्वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो व्वसुनीथ यज्ञैः ॥ घृतेन त्वं तन्वं व्वर्द्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ॥१२॥ मम कामाः सत्याः सन्तु—इति पठन् जुहुयात्। इदमग्नये वैश्वानराय वसुरुद्रादित्येभ्यः शतक्रतवे सप्तवते अग्नये अद्भ्यः पुरुषाय श्रियै भवानीशङ्कराभ्याञ्च, न मम। स्रुगवशिष्टं घृतं च रुद्रकलशे त्यजेत्। उपविश्य, स्रुवेण ईशानकोणाद् भस्मानीय—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः— इति ललाटे, ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम् इति ग्रीवायाम्, ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्—इति बाह्वोः, ॐ तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम्—इति हृदि। एवं त्र्यायुषं कुर्यात्।

ततोऽग्न्युपस्थानम्—

ॐ इन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोनुवर्त्मानोऽभवन्यथेन्द्रं दैवीर्विशो

T

मरुतोऽनुवर्त्मानोऽभवन् ।। एवमिमं यजमानं दैवीश्चविशो मानुषोश्चानुवर्त्मानो भवन्तु ।। 'ॐ घृतं मिमिक्षे···' 'ॐ चत्वारिशृंगा···' इत्यादिमन्त्रैः—

चतुर्भिश्चचतुर्भिश्च द्वाभ्यां पञ्चभिरेव च ।
हूयते च पुनर्द्वाभ्यां तस्मै यज्ञात्मने नमः ।।१।।
ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि मन्त्रकर्मक्रियाविधिः ।
सम्पूर्णं कुरु यज्ञेश गार्हपत्य नमोऽस्तु ते ।।२।।
यथा शस्त्रप्रहाराणां कवचं भवति वारणम् ।
तद्वदेवापघातानां शान्तिर्भवति वारणम् ।।३।।
स्वस्ति श्रद्धां यशः प्रज्ञां विद्यां बुद्धिं श्रियं बलम् ।
आयुष्यं चैवमारोग्यं देहि मे वाञ्छितं फलम् ।।४।।
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ।।५।।

ॐ यज्ञपुरुषाय नमः ।

होमसंकल्पः—

ॐ विष्णुः३ तत्सदद्य सार्धनवचण्डीपुरश्चरणकर्मणि अमुकगोत्रेणामुकनाम्ना मया आधारादिपूर्णाहुतिपर्यन्तं यद्यद्द्रव्यं यावद्यावत्संख्याकेन येनयेन मन्त्रेण यया यया कामनया यस्यै यस्यै देवतायै हुतं सा सा देवता प्रीयताम् । तास्ता देवताः शान्तिदाः पुष्टिदास्तुष्टिदा वरदा भवन्तु । संस्रवप्राशनम्, आचमनम् ।

ॐ तत्सदद्यास्मिन् सार्धनवचण्डीपुरश्चरणकर्मणि कृताऽकृतावेक्षणरूपब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थं न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थंश्च इदं पूर्णपात्रं सदक्षिणं प्रजापतिदैवतममुकगोत्रायामुकशर्मणे ब्राह्मणाय ब्रह्मणे तुभ्यमहं सम्प्रददे । ॐ स्वस्तीति प्रतिवचनम् । ततो ब्रह्मग्रन्थिविमोकः ।

'ॐ सुमित्रियान आप ओषधयः सन्तु"— इति प्रणीताजलं शिरसि सम्मृज्य, 'ॐ दुर्म्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः'— इत्यैशान्यां प्रणीतापात्रं न्युब्जीकृत्य पवित्रे अग्नौ प्रक्षिपेत् ।

ततः परिस्तरणक्रमेण बर्हिरुत्थाप्य, घृतेनाभिघार्य—'ॐ देवागातु विदोगातु वित्वागातुमित । मनसस्पत इमं देवयज्ञ ᳪ स्वाहावातेधाः 'स्वाहा।' इति मंत्रेण बर्हिर्होमः ।

(१)अथ पुण्याहवाचनम्

अथ यजमानः कलशस्थापनोक्तविधिना कलशं संस्थाप्य, तत्र 'ॐ तत्त्वायामि' इति मन्त्रेण वरुणमावाह्य संपूज्य च पुण्याहवाचनं प्रारभेत ।

यजमानः अवनिकृतजानुमण्डलः कमलमुकुलसदृशमञ्जलिं शिरस्याधाय (आचार्यः स्व-) दक्षिणेन पाणिना सुवर्णपूर्णकलशं (यजमानाञ्जलौ धारयित्वा, यजमानः आशिषः प्रार्थयेत्—

दीर्घा नागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णुपदानि च ।
तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु ।।

ॐ त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपाऽअदाभ्यः । अतो धर्माणि धारयन् ।। इति मन्त्रेण कलशं स्वशिरसा (पत्नीशिरसा च) संयोज्य, कलशं स्वस्थाने निदध्यात् ।

ततो यजमानः उदङ्मुखानां युग्मब्राह्मणानां हस्तेषु "अपां मध्ये-स्थिता देवाः, सर्वमप्सु प्रतिष्ठितम् । ब्राह्मणानां करे न्यस्ताः शिवा आपो भवन्तु मे—इत्युक्त्वा—"शिवा आपः सन्तु"—इति जलं दद्यात् ।

विप्राः—ॐ सन्तु शिवा आपः । यज०—लक्ष्मीर्वसति पुष्पेषु लक्ष्मी-र्वसति पुष्करे ।। सा मे वसतु वै नित्यं सौमनस्यं तथाऽस्तु नः ।। ॐ सौमनस्य-मस्तु इति विप्रहस्तेषु पुष्पं दद्यात् । विप्राः—ॐ अस्तु सौमनस्यम् ।। यज०—अक्षतं चास्तु मे पुण्यं दीर्घमायुर्यशो बलम् । यद्यच्छ्रेयस्करं लोके तत्तदस्तु सदा मम ।। ॐ अक्षतं चारिष्टं चास्तु—इति अक्षतान् दद्यात् । विप्राः—

---

(१) सम्पूज्य गन्धमाल्याद्यै ब्राह्मणान् स्वस्ति वाचयेत् ।
धर्मकर्मणि माङ्गल्ये, संग्रामेऽद्भुतदर्शने ।।
पुण्याहवाचनं दैवं, ब्राह्मणस्य विधीयते ।
एतदेव निरोङ्कारं कुर्यात् क्षत्रियवैश्ययोः ।।

T

अस्तु अक्षतमरिष्टञ्च[1] यजः - गन्धाः पान्तु-इति गन्धं दद्यात् विप्राः— ॐ अस्तु सौमङ्गल्यम् ।

यज०—ॐ पुष्पाणि पान्तु । विप्राः—ॐ सौश्रियमस्तु ।

यज०—ॐ ताम्बूलानि पान्तु । विप्राः—ॐ ऐश्वर्यमस्तु ।

यज०—ॐ दक्षिणाः पान्तु । विप्राः—ॐ बहुदेयं (आरोग्यं) चास्तु ।

यज०—ॐ दीर्घमायुः श्रेयः शान्तिः पुष्टिः तुष्टिः श्रीर्यशो विद्या विनयो वित्तं चास्तु ।

विप्रा०—ॐ बहुपुत्रं चायुष्यं चास्तु ।

यज०—यं कृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरणकर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते, तमहमोङ्कारमादिं कृत्वा ऋग्यजुः सामाथर्वाशीर्वचनं बहुऋषिमतं समनुज्ञातं भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये । विप्राः—वाच्यताम् । विप्रा आशीर्वादात्मकान् मन्त्रान् पठेयुः—

ॐ द्रविणोदाः पिपीषति जुहोत प्र च तिष्ठत । नेष्ट्रादृतुभिरिष्यत । ॐ सविता त्वा सवानाᳪ सुवतामग्निर्गृहपतीनाᳪ सोमो वनस्पतीनाम् । बृहस्पतिर्व्वाचऽइन्द्रो जैष्ठ्याय रुद्रः पशुभ्यो मित्रः सत्यो वरुणो धर्मपतीनाम् । ॐ न तद्रक्षा ठं. सि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमज ठं ह्येतत् । यो बिभर्ति दाक्षायण ठं हिरण्य ठं स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः । ॐ उच्चा ते जातमन्धसो दिवि सद् भूम्या ददे । उग्र ठं शर्म महि श्रवः ।

यजः— व्रतजपनियमतपःस्वाध्यायक्रतुशमदमदयादानविशिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम् । विप्राः—समाहितमनसः स्मः । यजमानो ब्रूयात्— प्रसीदन्तु भवन्तः । विप्राः-प्रसन्नाः स्मः ।

(ततो यजमानः वक्ष्यमाणैकसप्ततिवाक्यानि शान्तिरस्तु' इत्यादीनि पठन् पात्रे जलं पातयेत् । अरिष्टनिरसनमस्तु-यत्पापमिति द्वाभ्यां 'हताश्च ब्रह्मद्विषः इत्यादिसप्तवाक्यैश्च पात्राद् बहिरुत्तरतो जलं पातयेत् । ब्राह्मणाश्च-'अस्तुशान्तिरित्यादि प्रतिवचनं ब्रूयुः ।)

(१) अरिष्टं सूतिकागृहम्, गोरसो वा ।

ॐ शान्तिरस्तु ॐ पुष्टिरस्तु ॐ तुष्टिरस्तु ॐ वृद्धिरस्तु ऋद्धिरस्तु ॐ अविघ्नमस्तु, ॐ आयुष्यमस्तु ॐ आरोग्यमस्तु ॐ शिवमस्तु ॐ शिवंकर्मास्तु ॐकर्मसमृद्धिरस्तु ॐधर्मसमृद्धिरस्तु ॐवेदसमृद्धिरस्तु ॐशास्त्रसमृद्धिरस्तु ॐ धनधान्यसमृद्धिरस्तु ॐ पुत्रपौत्रसमृद्धिरस्तु ॐ इष्टसम्पदस्तु ॐ (वहिः) अरिष्टनिरसनमस्तु ॐ यत्पापं रोगोऽशुभमकल्याणं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु (अन्तः) ॐ यद् यच्छ्रेयस्तदस्तु ॐ उत्तरे कर्मणि निर्विघ्नमस्तु ॐ उत्तरोत्तरमहरहरभिवृद्धिरस्तु ॐ उत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः शोभनाः सम्पद्यन्ताम् ॐ तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नसम्पदस्तु ॐ तिथिकरण मुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नाधिदेवताः प्रीयन्ताम् । ॐ तिथिकरणे समुहूर्ते सनक्षत्रे सग्रहे सलग्ने साधिदैवते प्रीयेताम् । ॐ दुर्गापाञ्चाल्यौ प्रीयेताम् । ॐ अग्निपुरोगा विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम् । ॐ इन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयन्ताम् ॐ ब्रह्मपुरोगाः सर्ववेदाः प्रीयन्ताम् । ॐ विष्णुपुरोगाः सर्वदेवाः प्रीयन्ताम् । ॐ माहेश्वरीपुरोगा उमामातरः प्रीयन्ताम् । ॐ वसिष्ठपुरोगा ऋषिगणाः प्रीयन्ताम् । ॐ अरुन्धतीपुरोगा एकपत्न्यः प्रीयन्ताम् । आदित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाःप्रीयन्ताम् । ॐ ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च प्रीयन्ताम् । ॐ श्रीसरस्वत्यौ प्रीयेताम् । ॐ श्रद्धामेधे प्रीयेताम् । ॐ भगवती कात्यायनी प्रीयताम् । ॐ भगवती माहेश्वरी प्रीयताम् । ॐ भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम् । ॐ भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम् । ॐ भगवती ऋद्धिकरी प्रीयताम् । भगवती सिद्धिकरी प्रीयताम् । ॐ भगवती वृद्धिकरी प्रीयताम् । ॐ भगवन्तौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम् । ॐ सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम् । ॐ सर्वाः ग्राम देवताः प्रीयन्ताम् । ॐ सर्वा इष्टदेवताः प्रीयन्ताम् (वहिः) ॐ हताश्च ब्रह्मद्विषः । ॐ हताश्च परिपन्थिनः । ॐ हताश्च विघ्नकर्तारः । ॐ शत्रवः पराभवं यान्तु । ॐ शाम्यन्तु घोराणि ॐ शाम्यन्तु पापानि । ॐ शाम्यन्त्वीतयः । (अन्तः) ॐ शुभानि वर्द्धन्ताम् । ॐ शिवा आपः सन्तु । ॐ शिवा ऋतवः सन्तु । ॐ शिवाः अग्नयः सन्तु । ॐ शिवा आहुतयः सन्तु । ॐ शिवा वनस्पतयः सन्तु । ॐ शिवा औषधयः सन्तु । ॐ शिवा अतिथयः सन्तु । ॐ अहोरात्रे शिवे स्याताम् ।

ॐनिकामे निकामे न ꣳ पर्ज्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ।

यजः—शुक्राङ्गारकबुधबृहस्पतिशनैश्चरराहुकेतुसोमसहिता आदित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम् ।

ॐ भगवान् नारायणः प्रीयताम् । ॐ भगवान् पर्ज्जन्यः प्री० ॐ भगवान् स्वामी महासेनः प्रीयताम् । पुरोनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु । याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु । वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु । प्रातःसूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु । एतत्कल्याणयुक्तं पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये । विप्राः—वाच्यताम् ।

यजः—ब्राह्मं पुण्यं महच्चच सृष्टच्युत्पादनकारकम् ।
वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः ॥१॥

भो ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य गृहे अस्मिन्‌····कर्मणि पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु—इति यजमानः स्वयं मन्दस्वरेणोक्त्वा ब्राह्मणैः 'ॐ पुण्याहम्' इति तथोक्ते, पुनरेवमध्यमस्वरेणोक्त्वा तथैव तैरुक्ते, पुनरेव उच्चस्वरेणोक्त्वा तथैव तैरुक्ते इति त्रिः ॐ पुण्याहम् ॐ पुण्याहम् ॐ पुण्याहम्[1] ।

ॐपुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः । पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा ।

पृथिव्यामुद्धृतायान्तु यत्कल्याणं पुराकृतम् ।
ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः ॥२॥

भो ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य गृहे अस्मिन्‌····कर्मणि कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु३ । विप्राः—ॐ कल्याणम् ॐ कल्याणम् ॐ कल्याणम्३ ।

ॐ यथेमां वाचं कल्याणीमा वदानि जनेभ्यः । ब्रह्मराजन्याभ्या ꣳ शूद्राय चार्य्याय च स्वाय चारणाय च । प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयम्मे कामः समृद्धचतामुप मादो नमतु ॥

---

(१) 'एतदेव निरोङ्कारं कुर्यात् क्षत्रियवैश्ययोः'—इति वचनाद् ब्राह्मणातिरिक्तानां कृते, ओङ्कारोच्चारणस्य निषेधो वर्तते ।

यजः—सागरस्य तु या ऋद्धि (वृद्धि) र्महालक्ष्म्यादिभिः कृता ।
सम्पूर्णा सुप्रभावा च तां तां ऋद्धिं ब्रुवन्तु नः ।।३।।

भो ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य गृहे अस्मिन्....कर्मणि ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु३ विप्राः—ॐ ऋद्धयताम् ३ ।

ॐ सत्रस्य ऋद्धिरस्यगन्म ज्योतिरमृताऽअभूम । दिवं पृथिव्याऽअध्यारुहामाऽविदाम देवान्त्स्वर्ज्योतिः ।

स्वस्तिस्तु याऽविनाशाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा ।
विनायकप्रिया नित्यं तां तां स्वस्तिं ब्रुवन्तु नः ।।४।।

भो ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य गृहे अस्मिन्..........कर्मणि स्वस्तिं[1] भवन्तो ब्रुवन्तु३ । विप्राः—ॐ स्वस्तिः ॐ स्वस्तिः ॐ स्वस्तिः ।

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ।

मृकण्डसूनोरायुर्यद् ध्रुवलोमशयोस्तथा ।
आयुषा तेन संयुक्ता जीवेम शरदः शतम् ।।५।।

विप्राः—ॐ शतं जीवन्तु भवन्तः ।

ॐ शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम् । पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः ।

शिवगौरीविवाहे या या श्रीरामे नृपात्मजे ।
धनदस्य गृहे या श्रीरस्माकं साऽस्तु सद्मनि ।। ६ ।।

यज—भो ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य गृहे अस्मिन् कर्मणि श्रीरस्तु-इति भवन्तो ब्रुवन्तु । विप्राः— ॐ अस्तु श्रीः ॐ अस्तु श्रीः ॐ अस्तु श्रीः पूर्ववत् त्रिः ।

---

(१) स्वस्तिशब्दो द्वेधा शास्त्रेषु प्रयुज्यते, अव्ययोऽपि, अनव्ययोऽपि । अत्र स्वस्तिशब्दोऽनव्ययः । यथा भविष्योत्तरे-प्रतिगृह्णामि ते धेनुं कुटुम्बार्थे विशेषतः । स्वस्तिर्भवतु मे नित्यं सुखं चानुत्तमं तथा ।। इति— तत्त्वबोधिनीटीकायां स्वस्ति-शब्दोऽनव्ययोऽपि निर्धारितः ।

ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय। पशूनाᳬं रूपमन्नस्य रसो यश ᳬं श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा।

यजः–प्रजापतिर्लोकपालो धाता ब्रह्मा च देवराट्।
भगवान् शाश्वतो नित्यं स नो रक्षतु सर्वतः ॥७॥

विप्राः—ॐ भगवान् प्रजापतिः प्रीयताम् इति त्रिः।

ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जहुमस्तन्नो अस्त्वयममुष्य पिताऽसावस्य पिता वयᳬं स्याम पतयो रयीणाᳬं स्वाहा।

आयुष्मते स्वस्तिमते यजमानाय दाशुषे।
कृताः सर्वाशिषः सन्तु ऋत्विग्भिर्वेदपारगैः ॥८॥
देवेन्द्रस्य यथा स्वस्ति यथा स्वस्ति गुरोर्गृहे।
एकलिङ्गे यथा स्वस्ति तथा स्वस्ति सदा मम ॥९॥

भो ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य गृहे अस्मिन्…कर्मणि आयुष्मते स्वस्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु। विप्राः—ॐ आयुष्मते स्वस्ति इति त्रिः।

ॐ प्रति पंथामपद्महि स्वस्तिगामनेहसम्। येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु।

ॐ विश्वानि देवसवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आसुव।

मंत्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः।
शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयोऽस्तु वः ॥१॥
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः।
ब्रह्मवक्त्रे सदा नित्यं निघ्नन्तु तव शात्रवान् ॥२॥
अक्षतान्विप्रहस्तात्तु नित्यं गृह्णन्ति ये नराः।
चत्वारि तेषां वर्द्धन्ते आयु र्मेधा यशो बलम् ॥३॥

विप्राः—श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते धान्यं धनं बहुपशुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः।

पुण्याहवाचनेऽस्मिन् न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स विप्रवचनात् श्रीगणेशप्रसादाच्च परिपूर्णोऽस्तु।

पुण्याहवाचनाऽनन्तरं भवानीशङ्करयोर्बृहन्नीराजनं कुर्यात् तत्र मन्त्रः—

ॐ आरात्रि पार्थिव ᳪ रजः पितुरप्रायि धामभिः ।
दिवः सदाᳪसि बृहती वितिष्ठस आत्वेषं वर्तते तमः ॥

अथवा पूर्वं प्रधानपूजायामुक्तै (४१ पृ०) रेव मन्त्रैः नीराजनं कुर्यात् । नीराजनसमये सति संभवे निम्ननिर्दिष्टां *गीतिं (आरात्तिक्यं) गीत्यन्तरं वा पठेत् । ततः पूर्वं ४२ पृष्ठानुसारं पुष्पाञ्जलिं समर्प्य, प्रदक्षिणां कृत्वा, क्षमापनं पठेत् । ततोऽनुग्रहे नवश्लोकान् पठेत्, तद्यथा—

ॐ विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥१॥

---

*ॐ जय जय जगदम्ब ३ ! मातर्जय जय जगदम्ब ३ !
नीराजनमवलोकय मोचय भवमम्ब ३ ! ॥ १ ॥
कैलासोपार सुन्दर-मणिमय-मन्दिरगाम् ।
त्वां ध्यायन्ति महान्तः परिशङ्करसहिताम् ॥ २ ॥ जय २···· ।
दिव्यकुसुमशुभगन्धै — मण्डितसुभगाङ्गीम् ।
दिव्याम्बर-वरभूषण — भूषितसर्वाङ्गीम् ॥ ३ ॥ जय २···· ।
विधि-हरि-हर-शक्रादिक — सेवितमृदुचरणे ।
विबुध-वधू-परमादर — परिरचिताभरणे ॥ ४ ॥ जय २····
धनदादिक-सुरवन्दित-चरणे कृत-शरणे ।
तेषां मुकुटमणिव्रज - नीराजितचरणे ॥ ५ ॥ जय २····
अप्सरसां वरनिकरैः कृतपूजनसमये ।
ताण्डववेणु-विवादन-कोमलगानमये ॥ ६ ॥ जय २ ····
विविध – धनुश्चक्रादि – शक्त्यर्चनसुखदे ।
संशयपापविनाशिनि ! निन्दकजनभयदे ॥ ७ ॥ जय २ ····
प्रौढोल्लासविलासिनि ! सेवकगणसुखदे ।
तस्मिन् मुदितसमाजे मधुमुदिता स्मयसे ॥ ८ ॥ जय २ ····
सावरणं वटुकादिक, — गणपतिवलिसहितम् ।
स्वीकुरुतान्मम पूजन - मव मां, जह्यहितम् ॥ ९ ॥ जय २ ····
नवनिधिरचितविधानं शृणु त्वं जगदम्ब ।
कुरु मां तव चरणानां शरणागतमम्ब ! ॥१०॥ ॐ जय २ ····

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ॥
करोतु सा नः ॥२॥
या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते ॥
करोतु सा नः ॥३॥
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥
करोतु सा नः ॥४॥
सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याऽखिलेश्वरि ॥ करोतु सा नः ॥५॥
सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ॥ करोतु सा नः ॥६॥
सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि ॥ करोतु सा नः ॥७॥
शरणागतदीनार्त्तपरित्राणपरायणे ॥ करोतु सा नः ॥८॥
सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ॥ करोतु सा नः ॥९॥

अथ देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो,
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः ।
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥ १ ॥
विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया
विधेयाऽशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ।
तदेतत् क्षन्तव्यं जननि ! सकलोद्धारिणि! शिवे!
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ २ ॥
पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि ! बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे !
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ ३ ॥
जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया ।

तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ ४ ॥
परित्यक्ता देवा विविधविधसेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि ।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता
निरालम्बो लम्बोदर-जननि ! कं यामि शरणम् ॥ ५ ॥
श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातङ्को रङ्को विहरति चिरं कोटिकनकैः ।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
जनः को जानीते जननि ! जपनीयं जपविधौ ॥ ६ ॥
चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ।
कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानि ! त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ॥ ७ ॥
न मोक्षस्याकाङ्क्षा भवविभववाञ्छापि च न मे
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि ! सुखेच्छापि न पुनः ।
अतस्त्वां संयाचे जननि ! जननं यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति-जपतः ॥ ८ ॥
नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः,
किं रुक्षचिन्तनपरैर्न कृतं वचोभिः ।
श्यामे ! त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे,
धत्से कृपामुचितमम्ब ! परं तवैव ॥ ९ ॥
आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं, करोमि दुर्गे ! करुणार्णवेशि !
नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः, क्षुधातृषार्ता जननीं स्मरन्ति ॥१०॥
जगदम्ब विचित्रमत्र किं, परिपूर्णा करुणाऽस्ति चेन्मयि ।
अपराध–परम्परापरं नहि माता समुपेक्षते सुतम् ॥११॥

मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि ।
एवं ज्ञात्वा महादेवि ! यथायोग्यं तथा कुरु ।।१२।।

इति श्रीशङ्कराचार्यविरचितं देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम् ।

अभिषेकः—तत आचार्यः प्रधानदेवता-रुद्रकलशजलेन यजमानमूर्ध्नि अभिषेकं कुर्यात् । (अभिषेके पत्नी वामतस्तिष्ठेत्) ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ।१। ॐ आपोहिष्ठा ।४। ॐ वरुणस्यो.... । ५ । ॐ पुनन्तु । ६ । ॐ पयः पृथिव्याम् । ७ । ॐ द्यौः शान्तिः । ८ । ॐ सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः । वासुदेवो जगन्नाथस्तथा सङ्कर्षणो विभुः ।। ९ ।। आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः । अभिषिञ्चन्तु ते सर्वे धर्मकामार्थसिद्धये ।। १० ।। अमृताभिषेकोऽस्तु ।। ततः संकल्पादिकं कुर्यात् —(१) ॐ तत्सदद्य कृतैतत्सार्धनवचण्डीपुरश्चरणकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थम् अमुकसगोत्राय शर्मणे ब्राह्मणाय आचार्यदक्षिणां पाठकर्तृभ्यो विद्वद्भ्यः पाठदक्षिणां च दातुमहमुत्सृजे । (२) ॐ तत्सदद्य·······साङ्गतासिद्ध्यर्थं गोमूल्योपकल्पितां यत्किञ्चिद्दक्षिणां यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय दातुमहमुत्सृजे । (३) ॐ तत्सदद्य·······यथासेटकपरिमितम् अन्नं तन्मूल्योपकल्पितां दक्षिणां वा दातुमहमुत्सृजे (४) ॐ तत्सदद्य वृतान् आचार्यादिब्राह्मणान् कुमारीबटुकांश्च भोजनेनाहं तर्पयिष्ये । (५) ॐ तत्सदद्य·······अस्मिन् कर्मणि न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दीनाऽनाथेभ्यश्च यथाशक्ति विभज्य भूयसीं दक्षिणां दास्ये । ॐ तत्सत्—इति वदन् भूयसीं दद्यात् ।

श्रेयोदानम् - तत्राचार्यो यजमानहस्ते—ॐ शिवा आपः सन्तु—इति जलम्, ॐ सौमनस्यमस्तु-इति पुष्पम्, अक्षतं चारिष्टञ्चास्तु—इत्यक्षतांश्च दत्वा, पूगीफल-फलादिकञ्चादाय—ॐ भवन्नियोगेन मया श्रीभवानीशङ्करप्रीत्यर्थं कृतो यः साङ्ग-जपपाठहोमः, तदुत्पन्नं यच्छ्रेयः तत्तुभ्यमहं सम्प्रददे, तेन श्रेयसा त्वं श्रेयोवान् भव—इति फलादिकं यजमानाय दद्यात् । यजमानस्तु शिरसि आधाय, सुरक्षितस्थाने स्थापयेत्, यथावसरं भक्षयेच्च ।

T

आशीर्वादः—तत आचार्यो यजमानस्य तिलकं कृत्वा, रक्षाबन्धनं विधाय, प्रधानदेवस्य माल्यादिकं गणपतिञ्च—ॐ श्रीर्वर्चस्व····– इत्यादि आशीर्वादमन्त्रान् पठन् यजमानहस्ते दद्यात् । यजमानश्च विप्रहस्ताल् लब्धम् आशीर्वादात्मकफलादिकं शिरसि धारयित्वा स्वपत्न्या अञ्चले निदध्यात् । अत्रावसरे लोकाचारप्राप्तं माङ्गलिकम् आरात्तिक्यमपि सुवासिनीद्वारा विप्रद्वारा वा कारयेत् ।

विसर्जनम्—ततो यजमानः स्वहस्ते पुष्पाक्षतान् आदाय—

ॐ यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मत्कृताम् । इष्टकामसमृद्धयर्थं पुनरागमनाय च ।। – श्रीगणपति - लक्ष्मी - स्वेष्टदेवताः मम गृहे तिष्ठन्तु – इति सम्प्रार्थ्य पुष्पाक्षतप्रक्षेपेण स्थापितदेवान् विसर्जयेत् । ततश्च सर्वदेवपीठानि आचार्याय दद्यात् । यथा– ॐ सत्सदद्य इमानि सकलश-वस्त्र-प्रतिमा-सहितानि सदक्षिणाकानि यथानामगोत्राय आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे । स्वस्तीति–आचार्यो ब्रूयात् ।

ततश्च यजमानः—कृतेनानेन सार्धनवचण्डीपुरश्चरणकर्मणा भवानी-शङ्करौ प्रीयेताम्, न मम-इति जलमुत्सृजेत् । ततो हस्तौ सम्पुटीकृत्य प्रार्थयेत्—यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या, तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति, सद्यो वन्दे तमच्युतम् ।१। प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ।२। ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः । –इति सम्प्रार्थ्य आचार्यादिविप्राणां गुरुजनानाञ्च चरणयोः सादरं प्रणामं कुर्यात् ।

ततः प्रथमं कुमारी-बटुकानां चरणप्रक्षालनपूर्वकं पूजां विधाय, भोजयित्वा ब्राह्मणांश्च भोजयेत् । ताम्बूल-भोजनदक्षिणा–पाठदक्षिणाभिश्च संतोष्य स्वयमपि परिजनैः सह प्रसादं गृह्णीयात् ।

इति वाराहीतन्त्र-रुद्रयामलान्तर्गता-सार्धनवचण्डीपद्धतिः ।

❀ ❀ ❀

कर्मकाण्डिविदुषामत्युपयोगिविषयसंग्रहात्मकः—

परिशिष्टभागः

अथ षडक्षरगणपतिमन्त्रन्यासादिकम्—

ॐ अस्य श्रीगणपतिषडक्षरमन्त्रस्य भार्गव ऋषिः, अनुष्टप् छन्दः, विघ्नेशो देवता, वं बीजं, यं शक्तिः, हुँ कीलकं श्रीगणपतिप्रसादद्वारा मम (मद्यजमानस्य वा) अभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगः।

ॐ भार्गव ऋषये नमः, शिरसि। ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमः, मुखे। ॐ विघ्नेशो देवतायै नमः, हृदि। ॐ वं बीजाय नमः, गुह्ये। ॐ यं शक्तये नमः पादयोः। ॐ हुँ कीलकाय नमः, सर्वाङ्गे।

अथ करन्यासः— ॐ व अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्रं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ तुं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ डां अनामिकाभ्यां नमः। ॐ यं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ हुं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। अथ हृदयादिन्यासः—ॐ वं नमः—हृदयाय नमः। ॐ क्रं नमः—शिरसे स्वाहा। ॐ तुं नमः—शिखायै वषट्। ॐ डां नमः—कवचाय हुम्। ॐ यं नमः—नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ हुं नमः—अस्त्राय फट्। ॐ वं नमः-भ्रुवोर्मध्ये। ॐ क्रं नमः-कण्ठे। ॐ तुं नमः-हृदि। ॐ डां नमः—नाभौ। ॐ यं नमः—लिङ्गे। ॐ हुं नमः—पादयोः। ॐ वक्रतुण्डाय हुं नमः—सर्वाङ्गे। अथ ध्यानन्—

ॐ उद्यद्दिनेश्वररुचिं निजहस्तपद्मैः।
पाशाङ्कुशाऽभयवरान् दधतं गजास्यम्॥
रक्ताम्बरं सकलदुःखहरं गणेशं
ध्यायेत्प्रसन्नमखिलाभरणाभिरामम्॥१॥

एवं ध्यात्वा, मानसोपचारैश्च सम्पूज्य 'ॐ वक्रतुण्डाय हुम्' इति मन्त्रं जपेत्।

अथ गणेशाथर्वशीर्षम्- ॐ नमस्ते गणपतये। त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि। त्वमेव केवलं कर्त्तासि। त्वमेव केवलं धर्त्तासि। त्वमेव केवलंहर्त्तासि। त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि। त्वं साक्षादात्मासि नित्यम्। ऋतं वच्मि। सत्यं

वच्मि । अव त्वं माम् । अव वक्तारम् अव श्रोतारम् । अव दातारम् । अव धातारम् । अवानूचानमव शिष्यम् । अव पश्चात्तात् । अव पुरस्तात् । अवोत्तरात्तात् । अव दक्षिणात्तात् । अव चोर्ध्वात्तात् । अवाधरात्तात् । सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात् । त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः । त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः । त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि । त्वत्तस्तिष्ठति त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते । सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति । सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति । सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति । त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः । त्वं चत्वारि वाक्पदानि । त्वं गुणत्रयातीतः त्वमवस्थात्रयातीतः । त्वं देहत्रयातीतः । त्वं कालत्रयातीतः । त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम् । त्वं शक्तित्रयात्मकः । त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम् । त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् ।। गणादीन् पूर्वमुच्चार्य वर्णादींस्तदनन्तरम् । अनुस्वारः परतरः । अर्धेन्दुलसितम् । तारेण रुद्धम् । एतत्तव मनुस्वरूपम् । गकारः पूर्वरूपम् । अकारो मध्यमरूपम् । अनुस्वारश्चान्त्यरूपम् । बिन्दुरुत्तररूपम् । नादः सन्धानम् । सꣳहिता सन्धिः । सैषा गणेशविद्या । गणक ऋषिः । निचृद्गायत्री छन्दः । गणपतिर्देवता ।। ॐ गं गणपतये नमः एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि, तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ।

एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमङ्कुशधारिणम् । रदं च वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम् ।। रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम् । रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पैः सुपूजितम् ।। भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम् । आविर्भूतं च सृष्टयादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम् ।। एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः ।।

नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय श्रीवरदमूर्त्तये नमः ।। एतदथर्वशीर्षं योऽधीते । स ब्रह्मभूयाय कल्पते । स सर्वविघ्नैर्न बाध्यते । स सर्वतः सुखमेधते । स पञ्चमहापापात्प्रमुच्यते ।। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायम्प्रातः प्रयुञ्जानोऽ-

T

पापो भवति । सर्वत्राधीयानोऽपविघ्नो भवति । धर्ममर्थं कामं मोक्षं च विन्दति । इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम् । यो यदि मोहाद्दास्यति । स पापीयान् भवति । सहस्रावर्तनाद् यं यं काममधीते । तं तमनेन साधयेत् । अनेन गणपतिमभिषिञ्चति, स वाग्मी भवति । चतुर्थ्यामनश्नञ्जपति, स विद्यावान् भवति ।। इत्यथर्वणवाक्यम् । ब्रह्माद्यावरणं विद्यान्न बिभेति कदाचनेति ।। यो दूर्वाङ्कुरैर्यजति । स वैश्रवणोपमो भवति । यो लाजैर्यजति । स यशोवान् भवति । स मेधावान् भवति ।। यो मोदकसहस्रेण यजति । स वाञ्छितफलमवाप्नोति । यः साज्यसमिद्भिर्यजति । स सर्वं लभते, स सर्वं लभते । अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग् ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वी भवति । सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासन्निधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति । महाविघ्नात् प्रमुच्यते । महादोषात्प्रमुच्यते । महाप्रत्यवायात्प्रमुच्यते । स सर्वविद् भवति, स सर्वविद् भवति ।। य एवं वेद ।। इत्युपनिषत् ।

इति गणपत्यथर्वशीर्षम्

अथ नान्दीश्राद्धप्रयोगः— नान्दीश्राद्धं सौकर्याय संकल्पविधिनैवोच्यते । ताम्रपात्रे 'दधिकुंकुमयवाक्षतदूर्वाजलानि' एकीकृत्य, आचमनं प्राणायामः संकल्पं कुर्यात् । ॐ तत्सदद्य मासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुककर्मांगीभूतं सङ्कल्पविधिना आभ्युदयिकश्राद्धमहं करिष्ये । दूर्वांकुरं गृहीत्वा पात्रस्थदध्यादीनालोडयेत् । १—सत्यवसुसंज्ञका विश्वेदेवाः नांदीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं स्वाहानामयं च वृद्धिः । (सर्वं पितृकार्यमपि सव्येनैव स्वाहाकारसंयुक्तं यवैरेव दैववत्कुर्यात् । वृद्धिः–इत्युक्तौ पित्रासने जलप्रक्षेपः) २—अमुकगोत्रा मातृपितामहीप्रपितामह्यः नांदीमुख्यः ॐ भूर्भुवःस्वः इदं वः पाद्यं स्वाहानामयं च वृद्धिः । अमुकगोत्राः पितृपितामहप्रपितामहाः नांदीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं स्वाहानामयं च वृद्धिः । ३-अमुकगोत्राः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः पत्नीसहिताः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं व पाद्यं स्वाहानामयं च वृद्धिः । श्रीगणेशाम्बिकयोः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वां पाद्यं स्वाहानामयं च

वृद्धिः ॥ १ ॥ पादोदकं परित्यज्य आचमनं प्राणायामः कर्मपात्रस्थापनं कर्मपात्रे आसनं, आसने पात्रं, पात्रे पवित्रं, शन्नोदेवीति जलपरणम् । शन्नोदेवीरभिष्टयऽआपोभवन्तुपीतये । शंय्योरभिस्रवंतुनः ॥ १ ॥ यवोसीति यवप्रक्षेपः । यवोसियवयास्स्मद्वेषोयवयारातीर्दिवेत्वान्तरिक्षायत्वापृथिव्यैत्वाशुन्धन्ताँल्लोकाः पितृसदनाः पितृसदनमसि ॥ २ ॥ इदमत्र चन्दनं पुष्पं दधि च प्रक्षिपेत् । दधिक्राव्णोऽअकारिषञ्जिष्णोरश्वस्य व्वाजिनः । सुरभिनोमुखाकरत्प्रणऽआयुꣳषितारिषत् ॥ ३ ॥ स्वस्तिनऽइन्द्रेति दिग्बंधः । स्वस्तिनऽइन्द्रोव्वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषाव्विश्ववेदाः । स्वस्तिनस्ताक्ष्योऽरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु ॥४॥ इति पूर्वादिदिक्षु अक्षतान् विकिरेत् । संकल्पविधिना आभ्युदयिकश्राद्धोपहाराणां पवित्रतास्तु देश-काल-पाक-पात्र-उपहार-द्रव्यश्रद्धासम्पदस्तु । १-सत्यवसुसंज्ञका विश्वेदेवाः नांदीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं व आसनगन्धाद्युपचारकल्पनं स्वाहानामयं च वृद्धिः २-अमुकगोत्राः मातृपितामहीप्रपितामह्यः नांदीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं व आसनगंधाद्युपचारकल्पनं स्वाहानामयं च वृद्धिः ॥ ३-अमुकगोत्राः पितृपितामहप्रपितामहाः नांदीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्व इदं वः आसनगंधाद्युपचारकल्पनं स्वाहानामयं च वृद्धिः ॥ ४-अमुकगोत्राः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः पत्नीसहिताः नांदीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः आसनगंधाद्युपचारकल्पनं स्वाहानामयं च वृद्धिः ॥ ५-गणेशाम्बिकयोः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वां आसनगन्धाद्युपचारकल्पनं स्वाहानामयं च वृद्धिः ॥ २ ॥ २१ ॥ इदमर्चितं वो ज्योतिः सूर्योज्योतिः दीपकंज्योतिः पुष्पम् । अस्याभ्युदयिकश्राद्धस्यार्चनविधेः परिपूर्णतास्तु । आचमनम् । अस्याभ्युदयिकश्राद्धस्यार्च्चनसिद्धयर्थं १-सत्यवसुसंज्ञका विश्वेदेवाः नांदीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तं दास्यमानमन्नं यथाशक्ति सोपस्करं स्वाहानामयं च वृद्धिः । २-अमुकगोत्राः मातृपितामहीप्रपितामह्यः नांदीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः युग्मब्राह्मणभोजनं स्वाहानामयं च वृद्धिः । ३-अमुकगोत्राः पितृपितामहप्रपितामहाः नांदीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः युग्मब्राह्मणभोजनं स्वाहानामयं च वृद्धिः । ४-अमुकगोत्राः मातामह-

प्रमातामहवृद्धप्रमातामह्याः पत्नीसहिताः नांदीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः युग्मब्राह्मणभोजनं स्वाहानामयं च वृद्धिः ।। ५–श्रीगणेशाम्बिकयोः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वां युग्मब्राह्मणभोजनं स्वाहानामयं च वृद्धिः ।। ३ ।। ॐ उपास्मैगायतानर इत्यष्ट ऋचः पठेत् । ॐ उपास्मैगायतानरः पवमानायेंदवे अभिदेवाँ२ इयक्षते ।। १ ।। येत्वाहिहत्येमघवन्नवर्द्धन्येशाम्बरेहरिवोयेगविष्टौ । येत्वानूनमनुमदन्ति विप्राः पिबेन्द्रसोमꣳसगणोमरुद्भिः ।।२ ।। जनिष्ठाऽउग्रः सहसेतुरायमन्द्रऔजिष्ठोबहुलाभिमानः । अवर्द्धन्निन्द्रंमरुतश्चिद्त्रमातायद्वीरन्दधनिद्धनिष्ठा ।।३।। आतूनऽइन्द्रंवृत्रहन्नस्माकमर्द्धमागहि ।। महान्महीभिरूतिभिः ।। ४ ।। त्वमिन्द्रप्रतूर्तिष्वभिविश्वाऽअसिस्स्पृधः । अशस्तिहाजनिताविश्वतूरसित्वन्तूर्य्यतरुष्यतः ।। ५ ।। अनुतेशुष्मन्तुरयन्तमीयतुः क्षोणी शिशुन्नमातरा । विश्वास्तेस्पृधः श्नथयन्तमन्यवेवृत्रंयदिन्द्रतूर्व्वसि ।। ६ ।। यज्ञोदेवानाम्प्रत्येति सुम्नमादित्यासोभवतामृडयन्तः । आवोर्व्वाचोसुमतिर्व्ववृत्यादꣳहोश्चिद्याव्वरिवोव्वित्तरासत् ।। ७ ।। अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वꣳशिवेभिरद्यपरिपाहिनोगयम् । हिरण्यजिह्वः सुवितायनव्यसेरक्षामाकिर्न्नोअघशꣳसऽईशत ।। ८ ।। कृतस्य नांदीश्राद्धस्य प्रतिष्ठासिद्धयर्थं द्राक्षामलकनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे ।। ततः स्तुतिः । माता पितामही चैव तथैव प्रपितामही । पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।। १ ।। मातामहस्तत्पिता च प्रमातामहकादयः । एते भवन्तु सुप्रीताः प्रयच्छन्तु च मङ्गलम् ।।२।। इडामग्नेपुरुदꣳसꣳसनिङ्गोः शश्वत्तमꣳहवमानायसाध । स्यान्नः सूनुस्तनयोविजावाग्नेसातेसुमतिर्भूत्वस्मे ।।१।। इत्यनेन मंत्रेण पात्रटंकारं मुद्रार्पणेन कर्तव्यम् ।अनेन कर्मणा नान्दीमुखदेवताः प्रीयन्ताम्, वृद्धिः शिवं शिवम् । कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य विधेर्यन्न्यूनमतिरिक्तं तत्सर्वं भवतां ब्राह्मणानां वचनात् श्रीगणेशाम्बिकयोः प्रसादात् सर्वंविधेः परिपूर्णतास्तु । इति नान्दीश्राद्धप्रयोगः ।।

सूर्यादिनवग्रहाणां स्थापनं पूर्वं (१९)पृष्ठे उक्तम् [1]अथाधिदेवतानां स्थापन-

---

(१) शिवः शिवा गुहो विष्णु-ब्रह्मेन्द्र-यम-कालकाः ।
चित्रगुप्तोऽथ भान्वादि-दक्षिणे चाधिदेवताः ।। १ ।।

T

मुच्यते— (सूर्यदक्षिणपार्श्वे) ॐ त्र्यंबकंयजामहेसुगन्धिंपुष्टिवर्द्धनम् । उर्वारुकमिवबंधनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥१॥ ॐ भूर्भुवः स्वः शंभो इहागच्छेह तिष्ठ ॥ (सोमदक्षिणपार्श्वे) ॐ श्रीश्चतेलक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रेपार्श्वेनक्षत्राणिरूपमश्विनौव्यात्तम् ॥ इष्णन्निषाणामुम्मइषाणसर्वलोकम्मइषाण ॥ २ ॥ ॐ उमे इहागच्छेह तिष्ठ ॥ (भौमदक्षिणपार्श्वे) ॐ यदक्रंदः प्रथमंजायमानउद्यन्त्समुद्रादुतवापुरीषात् ॥ श्येनस्य पक्षाहरिणस्यबाहू उपस्तुत्यंमहिजाततेऽअर्वन् ॥३॥ ॐ स्कंद इहागच्छेह तिष्ठ । (बुधदक्षिणपार्श्वे) ॐ विष्णोरराटमसिविष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसिविष्णोर्ध्रुवोसि । वैष्णवमसिव्विष्णवेत्वा ॥४॥ ॐ विष्णो इहागच्छेह तिष्ठत ॥ (गुरुदक्षिणपार्श्वे) ॐ आब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसीजायतामा राष्ट्रेराजन्यः शूरऽइषव्योतिव्याधीमहारथो जायतांदोग्ध्रीधेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरंधिर्योषाविष्णू रथेष्ठाःसभेयोयुवास्ययजमानस्यव्वीरो जायतान्निकामे निकामेनः पर्जन्योव्वर्षतुफलवत्योनऽओषधयः पच्यन्तांयोगक्षेमो नः कल्पताम् ॥ ५ ॥ ॐ ब्रह्मन् इहागच्छेह तिष्ठ ॥ (शुक्रदक्षिणपार्श्वे) ॐ सजोषाइंद्रसगणोमरुद्भिः सोमंपिबवृत्रहाशूरव्विद्वान् ॥ जहिशत्रू ९ रपमृधोनुदस्वाथाभयंकृणुहि विश्वतोनः ॥६॥ ॐ शक्र इहागच्छेह तिष्ठ ॥ (शनिदक्षिणपार्श्वे) ॐ यमायत्वामखायत्वासूर्य्यस्यत्वातपसेदेवस्त्वासवितामध्वानक्तुपृथिव्याः स ᳬंस्पृशस्पाहि अर्चिरसि शोचिरसितपोऽसि ॥७॥ ॐ यम इहागच्छेह तिष्ठ ॥ (राहुदक्षिणपार्श्वे) ॐ कार्षिरसिसमुद्रस्यत्वाक्षित्याउन्नयामि । समापोऽअद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः ॥ ८ ॥ ॐ काल इहागच्छेह तिष्ठ ॥ (केतुदक्षिणपार्श्वे) ॐ चित्रावसोस्वस्तिते पारमशीय ॥ ॐ चित्रगुप्त इहागच्छेह तिष्ठ ॥ ९ ॥ [२]अथ प्रत्यधिदेवतानामावाहनं स्थापनं च ॥ (सूर्यस्यवामपार्श्वे) ॐ सनः पितेव सूनवेग्ने सूपायनोभव ॥ सच स्वानः स्वस्तये ॥ १ ॥ ॐ अग्ने इहागच्छेह तिष्ठ ॥ (सोमवामपार्श्वे) ॐ आपोअद्यान्वचारिषठंरसेनसमसृक्ष्महि ॥ पयस्वानग्नऽआगमं तम्मासठंसृजव्वर्चसा-

---

(२) अग्निरापो धरा विष्णुः, शक्रेन्द्राणीपितामहाः ।
पन्नगब्रह्माणौ वामे, ग्रहप्रत्यधिदेवताः ॥ २ ॥

प्रजयाचधनेनच ।। २ ।। ॐ आप इहागच्छध्वमत्र तिष्ठध्वम् ।। (भौमवामपार्श्वे) ॐ चिदसितयादेवतयांगिरस्वद्ध्रुवासीद ।। परिचिदसितयागिरस्वद्ध्रुवासीद ।।३।। ॐ धरे इहागच्छेह तिष्ठ ।। (बुधवामवार्श्वे) ॐ इदं विष्णुर्व्विचक्रमेत्रेधानिदधेपदम् ।। समूढमस्यपाᳪसुरे स्वाहा।।४।। ॐ भूर्भुवः स्वर्विष्णो इहागच्छेह तिष्ठ ।। (गुरुवामपार्श्वे) ॐ इन्द्रआसान्नेताबृहस्पतिर्दक्षिणायज्ञः पुरऽएतुसोमः ।। देवसेनानामभिभंजतीनाम्मरुतोयंत्वग्रम्।।५। ॐ इन्द्र इहागच्छेह तिष्ठ ।। (शुक्रवामपार्श्वे) ॐ इन्द्रंदैवीर्विशोमरुतोऽनुवर्त्मानोभवन्यथेन्द्रंदैवीर्विशो मरुतोऽनुवर्त्मानोभवन् ।। एवमिमंयजमानन्दैवीश्च व्विशोमानुषीश्चानुव्वर्त्मानो भवन्तु ।। ६ ।। ॐ इंद्राणि इहागच्छेह तिष्ठ ।। (शनिवामपार्श्वे) ॐ प्रजापतेनत्वदेतान्यन्योव्विश्वारूपाणिपरिताबभूव ।। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयᳪस्याम पतयो रयीणाम् ।।७।। ॐ प्रजापते इहागच्छेह तिष्ठ । (राहुवामपार्श्वे) ॐ नमोस्तुसर्पेभ्योयेकेचपृथिवीमनु ।। येऽअन्तरिक्षेयेदिवितेभ्यः सर्पेभ्योनमः ।। ८ ।। ॐ पन्नगा इहागच्छध्वमिह तिष्ठध्वम् ।। (केतुवामपार्श्वे) ॐ ब्रह्मजज्ञानंप्रथमंपुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोव्वेनआवः ।। सबुध्न्याउपमाऽअस्यविष्ठाः सतश्च योनिमसतश्चव्विवः ।। ९ ।। ॐ ब्रह्मन्निहागच्छेह तिष्ठ ।।

[3]अथ गणपंचकं स्थापयेत् (राहोरुत्तरतः) ॐ गणानां त्वागणपतिᳬहवामहे''''।।१।। ॐ भूर्भुवः स्वः गणपते इहागच्छे हतिष्ठ ।।(शनेरुत्तरतः) ॐ जातव्वेदसे सुनवामसोममरातीयतो निदहाति वेदः ।। सनः परिषदतिदुर्गाणिविश्वानावेवसिंधुं दुरितात्यग्निः ।।२।। ॐ दुर्गे इहागच्छेह तिष्ठ ।। (रवेरुत्तरतः) व्वायोयेतेसहस्त्रिणोरथासस्तेभिरागहि ।। नियुत्वान्त्सोमपीतये ।३। ॐ वायो इहागच्छेह तिष्ठ ।(राहोर्दक्षिणतः)ॐ घृतं घृतपावानः पिबतव्वसांवसापावानः पिबतांतरिक्षस्य हविरसिस्वाहा ।। दिशः प्रदिशऽआदिशोव्विदिशऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।। ४ ।। ॐ अंतरिक्ष इहागच्छेह तिष्ठ ।। (केतुदक्षिणतः)ॐ यावांकशामधुमत्यश्विनासूनृतावती ।। तयायज्ञंमिमिक्षतम् ।

(३) गणेशश्चाम्बिका वायुराकाशश्चाश्विनी तथा ।
ग्रहाणामुत्तरे पञ्च, लोकपालाः प्रकीर्त्तिताः ।। ३ ।। (स्कन्दपु०)

T

ॐ अश्विनौ इहागच्छेतामिह तिष्ठेताम् ।। इति पंचलोकपालानां स्थापनम् ।।६९।। अथ दिक्पालस्थापनम् ।। (मण्डलाद्बहिः पूर्वे) ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रठं हवेहवेसुहवठंशूरमिन्द्रम् ।। ह्वयामिशक्रम्पुरुहूतमिन्द्रठंस्वस्तिनोमघवाधात्विन्द्रः ।। १ ।। ॐ इन्द्र इहागच्छेह तिष्ठ ।। ॐ त्वंनोऽअग्नेतवदेवपायुभिर्मघोनोरक्षतन्वश्च वंद्य ।। त्रातातोकस्यतनयेगवामस्यनिमेष ठं रक्षमाणस्तवव्रते ।।२।। ॐ अग्ने इहागच्छेह तिष्ठ ।। ॐ सुगन्नुपंन्थां प्रदिशन्नएहिज्योतिष्मध्येह्यजरन्नआयुः ।। अपैतुमृत्युरमृतंमआगाद्वैवस्वतोनोअभयंकृणोतु ।।३।। ॐ यम इहागच्छेह तिष्ठ ।। ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहितस्करस्य ।। अन्यमस्मदिच्छसातइत्यानमोदेवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ।। ४ ।। ॐ निर्ऋते इहागच्छेह तिष्ठ ।। ॐ तत्त्वायामिब्रह्मणावंन्दमानस्तदाशास्तेयजमानो हविर्भिः ।। अहेडमानोवरुणेहबोध्युरुशठं समानऽआयुः प्रमोषीः ।। ५ ।। ॐ वरुण इहागच्छेह तिष्ठ ।। ॐ आनोनियुद्भिः शतिनीभिरध्वर ठं सहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् ।। वायोऽअस्मिन्त्सवने-मादयस्वयूयंपातस्वस्तिभिः सदानः ।। ६ ।। ॐ वायो इहागच्छेह तिष्ठ ।। ॐ वय ठंसोमव्रतेतवमनस्तनूषुबिभ्रतः ।। प्रजावन्तः सचेमहि ।। ७ ।। ॐ सोम इहागच्छेह तिष्ठ ।। ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसेहूमहेव्वयम् ।। पूषानोयथाव्वेदसामसद्वृधे रक्षितापायुरदब्धः स्वस्तये ।। ८ ।। ॐ शंकर इहागच्छेह तिष्ठ ।। (ईशानपूर्वयोर्मध्ये) ॐ अस्मेरुद्रामेहनापर्वतासोवृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः । यः शठंसतेस्तुवतेधायिपज्रइंद्रज्येष्ठा अस्माँ२अवन्तु देवाः ।। ९ ।। ॐ ब्रह्मन्निहागच्छेह तिष्ठ ।। (निर्ऋतिवरुणयोर्यमध्ये) ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरानिवेशनी यच्छानः शर्म सप्रथाः ।। ॐ अनन्त इहागच्छेह तिष्ठ ।।१०। ॐ वास्तोष्पतेप्रति जानीह्यस्मान्त्स्वावेशोअनमीवोभवानः ।। यत्त्वेमहेप्रतितन्नोजुषस्वशन्नोभव द्विपदेशंचतुष्पदे ।। ॐ वास्तोष्पते इहागच्छेह तिष्ठ ।। ॐ नमोस्तुसर्पेभ्योयेकेच पृथिवीमनु ।। ये अंतरिक्षेयेदिवितेभ्यः सर्पेभ्योनमः ।। १ ।। ॐ क्षेत्रपाल इहागच्छेह तिष्ठ ।।ततः कलशस्थापनोक्तविधिना ईशानदिग्भागे कलशं संस्थाप्य—ॐ असंख्याता सहस्राणि ये रुद्रा अधिभूम्याम् तेषांठंसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ।। ॐ असंख्यातरुद्रा इहागच्छध्वमत्रतिष्ठध्वम् ।। इति नवग्रहमखदेवानां स्थापनम् ।

अथ सर्वतोभद्रमण्डलस्थ-देवानामावाहनम्

१. ॐ ब्रह्मणे नमः
२. ,, सोमाय नमः
३. ,, ईशानाय नमः
४. ,, इन्द्राय नमः
५. ,, अग्नये नमः
६. ,, यमाय नमः
७. ,, निर्ऋतये नमः
८. ,, वरुणाय नमः
९. ,, वायवे नमः
१०. ,, अष्टवसुभ्यो नमः
११. ,, एकादशरुद्रेभ्यो नमः
१२ ,, द्वादशादित्येभ्यो नमः
१३. ,, अश्विभ्यां नमः
१४. ,, विश्वेभ्योदेवेभ्यो नमः
१५. ,, सप्तयक्षेभ्यो नमः
१६. ,, भूतनागेभ्यों नमः
१७. ,, गन्धर्वाऽप्सरोभ्यो नमः
१८. ,, स्कन्दाय नमः
१९. ,, नन्दीश्वराय नमः
२०. ,, शूलमहाकालाभ्यां नमः
२१. ,, दक्षादिप्रजापतिभ्योनमः
२२. ,, दुर्गायै नमः
२३. ,, विष्णवे नमः
२४. ,, पितृभ्यों नमः
२५. ,, मृत्युरोगाभ्यां नमः
२६. ,, गणपतये नमः
२७. ,, अद्भ्यो नमः
२८. ,, मरुद्भ्यो नमः
२९. ,, पृथिव्यै नमः
३०. ,, गङ्गादिनदीभ्यो नमः
३१. ,, सप्तसागरेभ्यों नमः
३२. ॐ मेरवे नमः (मण्डलाद्बहिः)
३३. ,, गदायै नमः
३४. ,, त्रिशूलाय नमः
३५. ,, वज्राय नमः
३६. ,, शक्तये नमः
३७. ,, दण्डाय नमः
३८. ,, खड्गाय नमः
३९. ,, पाशाय नमः
४०. ,, अङ्कुशाय नमः
४१. ,, गौतमाय नमः
४२. ,, भरद्वाजाय नमः
४३. ,, विश्वामित्राय नमः
४४. ,, कश्यपाय नमः
४५. ,, जमदग्नये नमः
४६. ,, वसिष्ठाय नमः
४७. ,, अत्रये नमः
४८. ,, अरुन्धत्यै नमः (तद्बाह्ये)
४९. (पूर्वे) ॐ ऐन्द्र्यै नमः
५०. (आग्नेय्याम्) ,, कौमार्यै
५१. (दक्षिणस्याम्) ,, ब्राह्म्यै
५२. (नैऋत्याम्) ,, वाराह्यै
(पश्चिमायाम्)
५३. ,,चामुण्डायै नमः
(वायव्याम्)
५४. ॐ वैष्णव्यै नमः
(उत्तरस्याम्)
५५. ॐ माहेश्वर्यै नमः
(ऐशान्याम्)
५६. ॐ वैनायक्यै नमः

—०❀०—

T

पूजानियमाः—स्नानं सन्ध्या तर्पणादि, जपहोमाऽमरार्चनम् ।
उपवासवता कार्यं, सायंसन्ध्याहुतीर्विना ॥
इक्षुरापः पयो मूलं, फलं ताम्बूलमौषधम् ।
भक्षयित्वाऽपि कुर्वीत, स्नानदानादिकाः क्रियाः ॥
सदोपवीतिना भाव्यं, सदा बद्धशिखेन च ।
विशिखो व्युपवीतश्च, यत्करोति न तत्कृतम् ॥
क्षुते निष्ठीविते सुप्ते परिधानेऽश्रुपातने ।
पञ्चस्वेतेषु चाचामेत्, श्रोत्रं वा दक्षिणं स्पृशेत् ॥

पत्नीस्थानम्:—सर्वेषु धर्मकार्येषु, पत्नी दक्षिणतः शुभा ।
अभिषेके निषेके च, पत्नी तिष्ठति वामतः ॥

पञ्चोपचाराः— गन्ध-पुष्पे धूपदीपौ नैवेद्यं पञ्च ते क्रमात् ।

षोडशोपचाराः—आवाहन-आसन-पाद्य-अर्घ्य-आचमनीय–स्नान-वस्त्र–यज्ञोपवीत–गन्ध (अक्षताः) पुष्प–धूप-दीप–नैवेद्य-ताम्बूलदक्षिणा-आरार्त्तिक्य-पुष्पाञ्जलयः ।

आरार्त्तिक्यम्:—आदौ चतुष्पादतले च, विष्णोर्द्वौ नाभिदेशे मुखमण्डलैकम् ।
सर्वेषु चाङ्गेष्वपि सप्तवारान्, आरार्त्तिकं भक्तजनस्तु कुर्यात् ॥

प्रदक्षिणाः— एका चण्ड्या रवेः सप्त, तिस्रः कार्या विनायके ।
हरेश्चतस्रः कर्तव्याः, शिवस्यार्धप्रदक्षिणा ॥

अष्टाङ्ग प्रणामः—उरसा शिरसा दृष्ट्या, मनसा वचसा तथा ।
पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां, प्रणामोऽष्टाङ्ग उच्यते ॥

पञ्चाङ्ग प्र०—बाहुभ्यां च सजानुभ्यां, शिरसा मनसा धिया ।
पञ्चाङ्गकः प्रणामोऽयं, विद्वद्भिः कथितः शुभः ॥

पञ्चरत्नानि- कनकं कुलिशं (हीरकः) नीलं पद्मरागञ्च मौक्तिकम् ॥

सप्तमृतिकाः—अश्वस्थानाद् गजस्थानाद्, वल्मीकात् सङ्गमाद् ह्रदात् ।
राजद्वाराच्च गोष्ठाच्च, मृदमानीय निक्षपेत् ॥

पञ्चपल्लवाः—अश्वत्थोदुम्बर–प्लक्ष–आम्र–न्यग्रोधपल्लवाः ॥

सप्तधान्यानि—शालि-मुद्ग-गोधूमाः तिल-कङ्गू-यवाः चणकाः ।

॥ शुभम्बोभवीतु सततम् ॥

सामग्री-स्मारकपत्रम्

श्रीफल	चांवल	प्रधान की प्रतिमा	दूध
रोली	जौ	प्रधान कलश	दही
मोली	गेहूं	पुण्याहवाचनपात्र	पान
सुपारी	मूंग	समिध (खेजड़े की)	पुष्पमाला
केशर	उडद	अरणी	दूर्वा
चन्दन	तिल	कलश	बिल्वपत्र
धूप	खांड	सराई	ऋतुफल
कपूर	(बूरा)	पालाशदण्ड	पञ्चपल्लव
पीली सरसों	मिश्री	(छीला डांड)	अनार (खंधारी)
शहद	घृत	पातल	
सिन्दूर	तेल (तिल्ली का)	दूने	
सर्वोषधि	नैवेद्य	मृतिका	
लौंग	मोदक	(वेदी वास्ते)	
इलायची	गुड	स्रुक्	
कंवलगट्टा	पतासा	स्रुवा	
गूगल	पकौडी	चौकी	
भैंसा गूगल	लालवस्त्र	पाटा	
रक्त चन्दन	सफेदवस्त्र	कुशा	रूई माचिस
जायफल	पीतवस्त्र		
भूर्जपत्र	कुमारी पूजन में	वरण सामग्री	आसन
कालीमिर्च	वस्त्र	पूजा में दक्षिणा	पूजा का थाल
विल्वफल	माताजी के वस्त्र	आचार्य दक्षिणा	आज्यस्थाली
मैनफल	सौभाग्यद्रव्य		
पञ्चमेवा	इत्र	वरण दक्षिणा	लोटा
अबीर		अन्नदान	पञ्चपात्र
गुलाल			
जनेऊ जोड़ा		गोदान	आसन
खील (चांवलों की)		भूयसी द०	

T

पुस्तक प्राप्तिस्थान—

(१) गोवर्धनमठ, पुरी (उडीसा)

(२) श्रीमदनमोहन व्यास
गुजरातियों का मुहल्ला
मु० पो०—केकड़ी (जिला-अजमेर)

(३) ईश्वरलाल बुकसेलर
त्रिपोलिया बाजार, जयपुर-२

मुद्रक—
श्री शङ्कर आर्ट प्रिण्टर्स, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर